
रोप का रावण

हर हिटलर



ारद्वाज

जसे त्रेतायुग मे

प्रकाशक,
नवलकिशोर-प्रेस,
लखनऊ.

यूरोप का रावण हर हिटलर

लेखक,

लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज

प्रकाशक,

नवलकिशोर-प्रेस,
लखनऊ.

मुद्रक
केसरीदास सेठ,
प्रबन्धक
नवलकिशोर-प्रेस
लखनऊ.

मूल्य एक रुपया चार आना
१९४१

तीसरी बार

जिन्हें
जर्मनी और हिटलर की असलियत
का पता नहीं है
ऐसे अपने करोड़ों देशवासियों को
यह पुस्तक सादर
समर्पित ।

"वि. म. ही."

अपनी बात

हिटलर का नाम आज कौन नहीं जानता ? पर ऐसे लोग बहुत कम मिलेंगे जो उसे सचमुच जानते हों। किसी व्यक्ति का नाम जानना एक बात है, उस व्यक्ति को जानना दूसरी।

घटनाचक्र जिस तेज़ी से आजकल घूम रहा है, ऐसा संसार के इतिहास में शायद ही पहले कभी हुआ हो। एशिया और यूरोप दो महाद्वीपों में युद्ध चल रहा है। ऐसी दशा में कौन कह सकता है कि कब क्या सूरत पैदा हो जाय ? किस क्षण हमें अपना भविष्य निश्चित करने के लिए आमादा होना पड़े ? क्या ख़बर ?

यूरोप की मौजूदा लड़ाई दो शासन-प्रणालियों—प्रजातंत्र और तानाशाही—के बीच की लड़ाई है। जहाँ तक भारत का सम्बन्ध है, यह तो निश्चय ही है कि वह प्रजातंत्र का हामी है। तानाशाही क्या है ? जब तक इस बात का लोगों को पूरा पता नहीं लगता तब तक प्रजातंत्र का सच्चा रूप नहीं समझा जा सकता। दुख के साथ मुक़ाबला करने पर ही सुख की सच्ची क़दर की जा सकती है। तानाशाह कौन होता है ? वह कैसे शासन करता है ? उस शासन में लोगों की व्यक्तिगत स्वतंत्रता का क्या हाल होता है ? ये ऐसे प्रश्न हैं, जिनका उत्तर इस पुस्तक के पन्ने पढ़ने से मिल जायगा।

जब हनुमान्‌जी राक्षसों के राजा रावण के दरबार में गये तो उसकी शान-शौकत देखकर उनके मुख से निकल पड़ा था—

यद्यधर्मो न बलवान् स्यादयं राक्षसेश्वरः ।
स्यादयं सुरलोकस्य सशक्रस्यापि रक्षिता ॥

अर्थात्,

यदि राक्षसों के इस स्वामी ने अधर्म का मार्ग ग्रहण न किया होता तो यह वास्तव में इन्द्रलोक का भी रक्षक हो सकता था ।

हिटलर और जर्मनी ने यदि आज यूरोप में यह हाऊ-हड़प न मचाई होती और अपनी शक्ति का प्रयोग क्रूर अमानुषी अत्याचार करने में न किया होता तो निस्सन्देह वह और उसका देश संसार की शान्ति और सभ्यता की वृद्धि और ज्ञान-विज्ञान की उन्नति में बहुत कुछ कर सकता था । दानव की शक्ति रखना बुरा नहीं, उस शक्ति का दानवों की तरह प्रयोग करना बुरा है ।

११—२—४० —लेखक

विषय-सूची

चित्र-सूची

कार्टून

नक़शे

यूरोप का रावण
हर हिटलर

नाज़ीवाद का जन्म

नाज़ीवाद का जन्म

सन् १४ की लड़ाई का ख़ात्मा होने पर जिस जगह फ़्रांस के एक जंगल में जर्मनी ने सुलहनामे पर दस्तख़त किये थे, वहाँ एक यादगार खड़ी कर दी गई है, जिस पर लिखा है—

"यहाँ ११ नवम्बर १९१८ को उन आज़ाद क़ौमों (जिन्हें जर्मनी ने गुलाम बनाना चाहा था) द्वारा पराजित जर्मन-साम्राज्य के अपराधी अभिमान का अन्त हो गया।"

इसके ठीक दो दिन पहले जर्मन-सम्राट् क़ैसर अपनी जान बचाने की ग़रज़ से हालैण्ड में जा छिपा था। वह दिन संसार के एक ज़बरदस्त राष्ट्र की हैसियत से जर्मनी के मिट जाने का दिन था।

सन्धि हो जाने पर और क़ैसर के जर्मनी से भाग जाने पर

सबसे पहली और मुख्य बात जो जर्मन-जाति को तय करनी थी, वह यह थी कि जर्मनी में किस प्रकार की शासन-प्रणाली को जन्म दिया जाय। यह सवाल बड़े महत्त्व का था। लोगों की भी इस बारे में एक राय न थी। कोई दल किसी प्रणाली के पक्ष में था तो कोई दूसरी ही तरह का शासन चाहता था। नतीजा यह हुआ कि जर्मनी में इस प्रश्न को लेकर लोगों में आपस में मारकाट मच गई। जगह-जगह छोटी-मोटी लड़ाइयाँ हुईं और काफ़ी ख़ून-खचर हुआ। आख़िरकार यह निश्चय हुआ कि आम चुनाव हो, जिसमें प्रजा की ओर से डेलीगेट चुने जायँ। डेलीगेटों की यही असेम्बली बाद में जर्मन प्रजातंत्र के लिए शासन-विधान तैयार करे। इस असेम्बली का सम्मेलन जून के महीने में (सन् १९१९ ई० में) "वेमार"-नामक जगह में होना निश्चित हुआ। इसी सम्मेलन में जर्मनी में प्रजातंत्र शासन-प्रणाली की स्थापना हुई और आगे के लिए उसका शासन-विधान तैयार किया गया।

नये जर्मन प्रजातंत्र की स्थापना तो हो गई, पर इसी से उसकी सारी दिक़्क़तों का अन्त न हो सकता था। युद्ध के बन्द होने के परिणामस्वरूप जो कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गई थीं, उन सबका उसे सामना करना था और इनमें से प्रत्येक को किसी-न-किसी प्रकार से हल भी करना था। महायुद्ध में जर्मनी के सेनापति मार्शल हिंडनबर्ग की कमाण्ड में जो सेना लड़ी थी, उसके सैनिकों को अब सेना से हटा दिया गया था। इस प्रकार लाखों सैनिक बेकाम हो गये थे। इनमें से जो लोग युद्ध से पूर्व किसानी का पेशा

करते थे, वे तो शान्तिपूर्वक अपने-अपने घर जाकर पुनः अपने कार्य पर लग गये। जहाँ से सन् १४ में उन्होंने अपने जीवन को छोड़ा था, वहीं से फिर उसे उठा लिया। पर सेना के सभी सैनिक तो गाँवों में बसनेवाले किसान न थे। जो लोग शहरों में रहते थे और वहाँ से काम छोड़-छोड़कर सेना में भर्ती हो गये थे, लौटने पर अब शहरों में उनके लिए किसी काम का मिलना मुश्किल था। महायुद्ध के कारण देश का व्यापार नष्ट हो चुका था, कारखानों में ताले लग गये थे और दफ़्तर बन्द पड़े थे। इन युद्ध से लौटे हुए सिपाहियों के लिए कोई धन्धा करने को न था। खाने-पीने की सामग्री की कठिनाइयाँ अलग थीं।

ऐसी दशा में यह कोई आश्चर्य में डालनेवाली बात न थी कि वे सिपाही, जिनको युद्ध के ज़माने में लड़ना, हत्या करना और लूटमार करना उनका कर्तव्य बताकर सिखाया गया था, अब शान्ति के ज़माने में भी इन्हीं कामों को करने लगे, जिनको अब क़त्ल और अपराध के नाम से पुकारा जाता था। उन्हें तो किसी-न-किसी तरह से अपने आश्रित कुटुम्बीजनों का पालन-पोषण करना था ही। एकदम सारे जर्मनी में हिंसा, उपद्रव और लूटमार होनी प्रारम्भ हो गई। बहुत-से सेना के अफ़सरों को उनकी मोटरों में से पकड़कर बाहर खींच लिया गया, सेना के पद-चिह्नों को फाड़ डाला गया और उनकी तलवारों को उनसे छीन-छीनकर तोड़ दिया गया। बहुत-सी दूकानों को लूट लिया गया, और दिन-दहाड़े घरों में डाके पड़ने लगे, हत्याएँ होने लगीं। गलियों में मशीनगनें चक्कर

लगाती थीं और किसी को पता न था कि कब उसे अगली गोली का शिकार बन जाना पड़े। मनुष्य के प्राणों का मूल्य बड़ा सस्ता हो गया। क्यों? महायुद्ध ने इसका भी पाठ संसार को पढ़ाया था। उस समय के अनेक जर्मन राजनीतिज्ञों को अपनी सम्मतियों का मूल्य अपने जीवन द्वारा चुकाना पड़ा। वेमार में स्थापित होनेवाली जर्मन सरकार को यथाशक्ति देश में पुनः शान्ति स्थापित करनी थी और इस अराजकता का ख़ात्मा करना था।

आर्थिक संकट

आर्थिक संकट के कारण देश में एक दूसरी ही तबाही थी। सन् १९२० में आकर इस आर्थिक संकट ने ऐसा भयानक रूप धारण कर लिया कि ऐसा दिखाई देने लगा, मानो आस्ट्रिया, जर्मनी और हंगरी तीनों के तीनों दिवालिये हो जायँगे। इस स्थिति का कारण यह था कि जर्मनी की सरकार अपना सारा सोना तो युद्ध के लिए सामान मोल लेने में ख़र्च कर चुकी थी, और देशों की भाँति उसने भी अपने यहाँ काग़ज़ का सिक्का (नोट) चलाया था। इस काग़ज़ी सिक्के का अर्थ यह होता है कि मानो सरकार ने हमारा असली सिक्का हमसे उधार ले लिया है और उसके बदले हमें एक काग़ज़ पर लिखकर वादा किया है कि जब हम अपना असली सिक्का माँगेंगे, तभी इस काग़ज़ के पेश करने पर हमें उसका असली मूल्य मिल जायगा। जिन देशों में सरकार की साख अच्छी होती है, उन्हीं में काग़ज़ का सिक्का भी सफलतापूर्वक चलता रहता है।

जब सरकार की साख में किसी प्रकार की ख़राबी आ जाती है, तभी इस प्रकार के नोटों का चलना मुश्किल हो जाता है। युद्ध के बाद जर्मन-सरकार की साख बिलकुल जाती रही। उसने महायुद्ध के समय में अपने यहाँ नोट चलाये थे, किन्तु १९१९ के बाद एक तो देश का व्यापार चौपट हो गया था, उद्योग-धन्धे जाते रहे थे और दूसरे लड़ाई के ख़र्च में उसे बहुत-सा धन "मित्रराष्ट्रों" को देना पड़ा था। इस तरह देश का सोना ख़तम हो गया था और सरकार बराबर नोट बनाती जा रही थी। इस नीति का नतीजा यह हुआ कि नोट का मूल्य दिन-पर-दिन सस्ता होता चला गया। लोगों को इस बात का पता लग गया कि सरकार के पास इतना सोना है ही नहीं कि अपनी प्रतिज्ञाओं को निभा सके। इसी को साख का उखड़ जाना कहते हैं।

ज्यों-ज्यों यह बात ज़्यादा लोगों को मालूम होती गई, मार्क (जर्मनी का सिक्का) के नोटों का मूल्य गिरता ही गया। १५ नवम्बर सन् १९२३ तक तो हालत यह हो गई कि एक अमेरिकन डालर के बदले में (जिसका युद्ध से पहले ५ मार्क मूल्य था) २५०००००००००००० मार्क के नोट मिल सकते थे। इसका अर्थ यह था कि जर्मनी में असली रुपया नाम को भी न रहा था। सिक्के की दर में कमी आने के कारण उन लोगों का तो सत्यानाश ही हो गया, जिनका धन बैंकों में जमा था या जिनके पास नोट थे। इसका प्रभाव उन लोगों को छोड़कर, जिनके पास ज़मीन थी, जर्मनी की क़रीब-क़रीब सारी आबादी पर पड़ा।

ऐसी दशा में कई बार देश में उपद्रवों द्वारा सरकार को बदल डालने का प्रयत्न भी किया जाना स्वाभाविक ही था। इस प्रकार का पहला विद्रोह सन् १९२० ई० में हुआ, जब कि रूर-प्रांत में कोयले की खानों में काम करनेवाले मज़दूरों ने हड़ताल कर दी थी। आगे चलकर सन् १९२१ में भी दो बार सरकार के खिलाफ़ आंदोलन हुआ। न सरकार ही इन आंदोलनों को दबा सकी और न आंदोलनकर्ता ही किसी ऐसी सरकार की स्थापना करने में सफल हो सके, जो वहाँ के मज़दूरों और साधारण जनता की कठिनाइयों को दूर कर सकती।

यह दशा महायुद्ध के बाद से लेकर सन् १९२३ तक चलती रही। सन् २३ में जर्मनी के सौभाग्य से डॉक्टर स्ट्रेसमेन नाम का एक नेता जर्मनी का चांसलर चुना गया। जर्मनी में चांसलर का पद वही होता है, जो ब्रिटेन आदि देशों में प्रधान मंत्री का। इस समय तक जर्मनी ने इस बात की भी घोषणा कर दी थी कि अपनी आर्थिक अवस्था के बिगड़ने के कारण वह मित्रराष्ट्रों को एक अनिश्चित समय तक उस रुपये को न दे सकेगा, जो कि उसकी ओर से वर्साई की सन्धि के अनुसार मित्रराष्ट्रों को दिया जाना था। इससे मित्रराष्ट्रों को भी इस बात की चिन्ता हो चली थी कि जैसे बने जर्मनी की आर्थिक अवस्था को सुधारा जाय। अमेरिका भी इस प्रश्न पर बड़ी गम्भीरतापूर्वक विचार कर रहा था।

अतः सन् १९२३ में एक अन्तर्राष्ट्रीय कमेटी जर्मनी की आर्थिक अवस्था की जाँच करने के लिए बैठी। अमेरिका के जनरल डावेस

इस कमेटी के सभापति थे। इस कमेटी का उद्देश्य इस बात की जाँच करना था कि जर्मनी किस हद तक बग़ैर बरबाद हुए लड़ाई के व्ययवाला रुपया मित्रराष्ट्रों को दे सकता है। जनरल डावेस की कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में कई ऐसी बातों की सिफ़ारिश की, जिनके अमल में लाने से जर्मनी की आर्थिक कठिनाइयाँ दूर हो सकती थीं। सब राष्ट्रों ने मिलकर जर्मनी को काफ़ी सोना उधार दिया, जिससे वह अपनी गिरी हुई हालत को सुधार सके।

इसी समय से जनरल डावेस की योजना के फलस्वरूप जर्मनी पुनः अंधकार से निकलकर उजाले में आया। उसका कार-बार फिर से जमा। सिक्के-सम्बन्धी कठिनाइयाँ भी धीरे-धीरे दूर होने लगीं। बाज़ारों में फिर वही चहल-पहल आ गई और लोग धीरे-धीरे शान्तिपूर्वक अपने-अपने रोज़गार से लग गये।

जब डॉक्टर स्ट्रेसमेन पहली बार सन् २३ में चांसलर के पद पर आये थे तो उन्हें ऊपर वर्णन की हुई आर्थिक कठिनाइयों के अलावा कई उपद्रवों और विद्रोहों का भी सामना करना पड़ा था। एक इसी प्रकार का उपद्रव म्यूनिक में हुआ था। इसका नेता था—अडोल्फ़ हिटलर—जिसको आज संसार का बच्चा-बच्चा अच्छी तरह जानता है। वह महायुद्ध के दिनों में सेना में काम कर चुका था, और अब 'नेशनल सोशलिस्ट' (National Socialist) या नाज़ीपार्टी का नेता बन गया था। इटली में इससे कुछ दिन पूर्व ही 'डिक्टेटरशिप' के शासन का जन्म हो चुका था। हिटलर भी इसी आदर्श को सामने रखकर अपनी पार्टी के बल को बढ़ाने की

योजना में लगा हुआ था । हिटलर का यह म्यूनिकवाला विद्रोह दबा दिया गया और उसे कुछ महीने जेलखाने में भी बिताने पड़े। ठीक दस वर्ष बाद यही हिटलर जर्मनी का डिक्टेटर हुआ ।

डॉक्टर स्ट्रेसमेन इस बात को भली भाँति समझते थे कि जर्मनी की उन्नति के लिए यह बहुत ज़रूरी है कि ब्रिटेन और फ्रांस-जैसे शक्तिशाली राष्ट्रों से उसकी मित्रता रहे और एक राष्ट्र दूसरे की मदद से दिन-दिन उन्नति की ओर अग्रसर होता चला जाय । उस वक़्त ब्रिटेन के प्रधान मंत्री सर आस्टन चेम्बरलेन थे । फ्रांस के प्रधान मंत्री भी इस प्रकार के मेल को अच्छा समझते थे । तीनों के उद्योग से सन् १९२६ में तीनों राष्ट्रों में "लोकार्नो"-नामक स्थान पर संधि हो गई, जिसमें यह तय हुआ कि तीनों राष्ट्र भविष्य में मेल से रहेंगे और किसी बाहरी देश द्वारा आक्रमण किये जाने पर एक दूसरे की सहायता करेंगे । इस संधि के अगले ही वर्ष जर्मनी राष्ट्रसंघ में भी शामिल हो गया ।

डावेस-योजना के कार्य-रूप में परिणत होने से जर्मनी में फिर एक बार खुशहाली की बहार आ गई । उसका व्यापार पुन: चमक उठा । उसे और देशों के समान सेना पर धन-व्यय नहीं करना पड़ रहा था; क्योंकि वर्साई की संधि में एक शर्त यह भी थी कि जर्मनी अपनी सेना बहुत कम कर देगा और आगे अस्त्र-शस्त्र न बनावेगा । इस कारण वह बड़ी शीघ्रता से फिर मालामाल होने लगा । उसके पड़ोसी राष्ट्र जो सेना पर और लड़ाई के हथियार आदि मोल लेने में अपना धन ख़र्च करते थे, वह जर्मनी में नहीं

हो रहा था। अत: वह अपने कई पड़ोसी राष्ट्रों से जल्दी ही ज़्यादा धनी हो गया, क्योंकि जर्मन प्रजातंत्र के स्थापित होने में सोशलिस्टों का काफ़ी हाथ था, इसलिए मिलों और कारख़ानों में काम करने-वाले मज़दूरों की दशा को बेहतर बनाने की ओर भी प्रजातंत्र-सरकार ने काफ़ी ध्यान दिया। सन् १९२९ के समाप्त होने पर जब व्यापार की मंदी के कारण विश्वव्यापी अर्थ-संकट उत्पन्न हुआ तो जर्मनी पर भी उसका बहुत प्रभाव पड़ा। सन् ३१ में वह क़रीब-क़रीब दिवालिया ही हो गया और लड़ाई का ख़र्चा भी न दे सका। इस आर्थिक संकट के समय ब्रिटेन और फ्रांस ने फिर उसे ऋण देकर उसकी सहायता की।

जहाँ उन दिनों जर्मनी में इस तरह की आर्थिक कठिनाइयों के कारण तबाही का सामना करना पड़ रहा था, वहीं राजनैतिक दलबन्दियों के कारण भी लोगों की नाक में दम था। इनमें से दो दल मुख्य थे। एक दल नाज़ी लोगों का था और दूसरा था कम्यूनिस्टों का।

नाज़ीवाद का पिता

पाठकों को यह जानकर आश्चर्य होगा कि हिटलर नाज़ीदल का ख़ुद जन्मदाता नहीं है। इस दल की जड़ जमानेवाले, इसे सींचकर बड़ा करनेवाले तो और ही लोग थे जिनको काम निकल जाने के बाद—शक्ति हाथ में आने पर—या तो हिटलर ने निकाल बाहर किया या मरवा डाला। उन बुज़ुर्गों के—यदि 'बुज़ुर्ग' शब्द

नाज़ीदल के संस्थापकों के लिए ठीक होगा तो—लगाये हुए और पाल-पोसकर बड़े किये हुए वृक्ष की छाया के मज़े ही आज हिटलर जर्मनी का तानाशाह बनकर ले रहा है। काम कोई करे, लाभ कोई उठाये—

कर्म करै कोउ और ही और पाव फल भोग।
अति विचित्र भगवंत-गति को जग जानइ जोग॥

नाज़ीदल का असली जन्मदाता एंटन ड्रेक्सलर नाम का एक मिस्त्री था। पिछले महायुद्ध के ज़माने में, ७ मार्च (सन् १९१८) को इस व्यक्ति ड्रेक्सलर ने जो अंकुर जमाया था वही आगे बढ़कर नाज़ीदल के रूप में प्रसिद्ध हुआ।

तब क्या नाज़ियों के युग में जो-जो हैवानी बातें हुई हैं—जिन-जिन देशों का गला घोंटा गया है—उनके लिए ड्रेक्सलर को अपराधी ठहराया जाय ? न, ड्रेक्सलर ने पार्टी की जो नीति निर्धारित की थी नाज़ियों ने बाद में उसमें काफ़ी हेर-फेर किये जिससे पार्टी की काया और आत्मा दोनों ही बदल गईं।

१९१९ में अगर कोई नाज़ीदल के सदस्यों का रजिस्टर उठाकर देखता तो उनकी संख्या उतनी ही मिलती जितने कि एक हफ़्ते में दिन। अडोल्फ़ का नाम उनमें सबसे नीचे लिखा मिलता। १९३३ तक आते-आते वही अडोल्फ़ 'फ़्यूरर' बन गया और नाज़ीदल के सदस्यों की संख्या ९,२०,००० पर पहुँच गई। क्यों ?

हिटलर मैकियावली * का चेला है और संसार भर के अवसर-वादियों का गुरु ।

प्रत्येक व्यक्ति जो अवसरवादी होता है, उसके लिए यह आवश्यक होता है कि वह पहले जिस देश में रहता हो या जिस स्थान में कार्य करना चाहे, उस देश या स्थान के रहनेवालों की आवश्यकताओं का—उनकी परेशानियों और उनकी समस्याओं का—मनोवैज्ञानिक अध्ययन करे। ऐसा कर चुकने पर फिर अपनी नीति का लक्ष्य उन्हीं मर्मस्थानों को बनावे, जो जनता के हृदय पर सीधा असर करें। हिटलर की कार्य-प्रणाली पर नजर डालने से यह बात बिलकुल स्पष्ट हो जाती है। कार्य-क्षेत्र में कूदने से पहले हिटलर ने भली भाँति देख लिया था कि 'जर्मन प्रजातंत्र' के स्थापित हो जाने पर भी जर्मनों को सन्तोष नहीं हुआ। अतः एक नई प्रकार की शासन-प्रणाली के लिए काफ़ी स्थान था। उसने अवसर से लाभ उठाकर गर्म लोहे पर चोट मारी।

संक्षेप में उस काल के जर्मनी की दशा भी यह थी—

(१) वर्साई की संधि के प्रति जर्मनों के हृदय में क्षोभ था। जर्मनी की शक्ति, जो इसमें क्षीण कर दी गई थी, जर्मन-जाति के विचार में उसका "राष्ट्रीय अपमान" था।

---

* मध्य युग का इटली का एक राजनीतिवेत्ता, जिसका विचार था कि शासक को शासनसम्बन्धी कार्यों में भले-बुरे अथवा सत्य-असत्य का विचार न करना चाहिए। जिस तरह बने, अपना काम निकाल लेना चाहिए। उसने अपनी पुस्तक 'राजकुमार' में इन्हीं सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है।

(२) यहूदी लोग सम्पन्न थे और बहुत-से सरकारी और ग़ैरसरकारी पदों पर थे। वे जर्मन न थे।

(३) निःशस्त्रीकरण की शर्त के कारण जर्मनजाति सैनिक ह्रास का अनुभव करती थी।

(४) काम करनेवाले मज़दूरों और किसानों की माली हालत अच्छी न थी।

हिटलर संसार के उन सौभाग्यशाली व्यक्तियों में से है, जिन्हें भगवान् ने भाषण-कला के बल से जनसमूह के हृदय पर अधिकार कर लेने की शक्ति दी है। आम जनता को अपने वश में कर लेने की कला में हिटलर के जोड़ का और कोई नहीं है। पं० जवाहरलाल नेहरू ने 'जर्मनी में नाज़ियों की जीत' का वर्णन करते हुए एक स्थान पर लिखा है:—

"हिटलर बड़ा विलक्षण और ज़ोरदार वक्ता है। उसने अपने बेशुमार श्रोताओं की भावनाओं को जगाया और जो कुछ हो रहा था उसका सारा दोष मार्क्सवादियों और यहूदियों के सिर मढ़ दिया।.........आर्थिक संकट और भी विकट हुआ तो नाज़ीदल में और अधिक लोग भर्ती हो गये।"

तड़क-भड़क और शान-शौकत

जर्मनी के किसी भी नगर में, १६२८ से लेकर १६३२ तक के किसी भी दिन। नगर का सबसे बड़ा हाल, लोगों से खचाखच भरा हुआ। बहुत-से २५ से नीचे की उम्र के। छत से नीचे अनगिनत झंडे लटके हुए। एक स्थान ख़ाली और लाल रँगा

हुआ, बीच में गोल और सफ़ेद, इसमें मोटी रेखाओं से खिंचा हुआ स्वास्तिक निशान। हाल के एक ओर बड़े-बड़े अक्षरों में—जो आधे मील के फ़ासले से पढ़े जा सकें—लिखा हुआ—"जर्मनी जाग।" चारों ओर दरवाज़ों पर और मंच के आसपास नाज़ीदल की वर्दी में नाज़ी जवान खड़े हुए, क्रान्ति और हिंसा की सजीव मूर्त्ति बने।

काफ़ी रात हो चुकी। कोई पर्वा नहीं, नाज़ी सभाएँ देर से ही हुआ करती हैं। इससे उनका महत्त्व बढ़ जाता है। सुनो,—सैनिक बैंड बजने लगे। एकदम चार। पहले नाज़ीदल के चिह्नों को लिये हुए नाज़ी सैनिक मार्च करते हुए दाख़िल होते हैं। भीड़ के हज़ारों कण्ठों से निकल पड़ा—'हेल' 'हेल' 'हेल'। इसके पीछे अनेक मुस्तैद अंगरक्षकों के बीच से एक छोटी टुकड़ी और निकली, आम तौर से सब के सब भूरे रंग की वर्दी पहने हुए। यह कौन? नाज़ियों के नेता।

सबसे अख़ीर में, विजेता सेनापति के सदृश अपने सैनिकों की ओर गर्वभरी मुस्कराहट की बखेर करता हुआ, निकला नाज़ियों का देवता—'उनका दूसरा ईसा' पहले से भी बड़ा—अडोल्फ़ हिटलर। वर्दी नदारद। बरसाती कोट, काले जूते और मोज़े, काले रंग का सूट और इसी रंग की टाई, सफ़ेद कमीज़, एक ओर को सुनहरी बिल्ला लगा हुआ।

उसके आते ही सारे जनसमूह ने ज़ोर से नारा लगाया—"हाइल हिटलर।" दीवारों से प्रतिध्वनि हुई—"हाइल हिटलर।"

आकाश में गूँजने लगा—"हाइल हिटलर !" यह जर्मनी के 'सीज़र' का स्वागत था।

शान्ति स्थापित हुई। नेता अपने साथियों और अंगरक्षकों के साथ मंच पर पहुँचा। सब लोग अपनी-अपनी जगह बैठते हैं। छुटभइयों में से पहले एक खड़ा होकर श्रोताओं को व्याख्यान देना शुरू करता है। वह इस बात की खुद ही कल्पना कर लेता है कि सब लोग जो वह कहता है, उससे सहमत हैं। क़रीब पाँच मिनट तक वह सभा को नाज़ीदल का उद्देश समझाता है, नेताओं का परिचय देता है और राजनैतिक चुहुलबाज़ियाँ करता है। वक्ता फिर अनायास ही क्षोभ और दया की मूर्त्ति बन जाता है। जर्मनों की तकलीफ़ों की दुहाई देने लगता है। वे, उनका कुटुम्ब, उनका देश—सब के सब ख़तरे में हैं। संसार के सब देशों में उनकी हालत सबसे बुरी है किन्तु इसमें उनका कुछ दोष नहीं। यह कहते-कहते वक्ता ने आवेश में आकर श्रोताओं से सवाल कर डाला:—

"हमारी बदतरी का कारण क्या है ?"

"शासन (प्रजातंत्र) प्रणाली।"—पाँच सौ सिखाये हुए गलों से उत्तर निकला।

"यह प्रणाली किन लोगों की वजह से टिकी हुई है ?"

"यहूदियों की वजह से !"

कई बार यह सवाल दोहराया जाता है। हर बार इन्हीं शब्दों में जवाब मिलता है पर आवाज़ें पाँच सौ की जगह हज़ार हो जाती हैं।

फिर—

"अडोल्फ़ हिटलर हमारा क्या है ?"

"मज़हब !"

"और क्या ?"

"अन्तिम आशा !"

"और क्या ?"

"हमारा नेता !"

फ़ौजी बैन्ड ने बड़ा शानदार सलाम दिया। 'नेता' उठा। एक क्षण तक गंभीर मुद्रा से श्रोताओं की ओर देखा—मेस्मरिज़्म की पहली क्रिया। कुछ भर्राई-सी और रूखापन लिये हुए पर पुरज़ोर आवाज़ में उसने भाषण देना शुरू किया। फिर तो एक घंटा, दो घंटे, चार घंटे तक। श्रोता उससे बँध-से जाते हैं—उनकी विवेक-शक्ति खिचकर 'नेता' के हाथों में पहुँच जाती है। उनके दिमाग़ और दिलों पर वह जो चाहे लिख सकता है, खींच सकता है। उसका भाषण तूफ़ान-जैसा होता है। उसमें वह अपने स्वर से गर्जना करता है,—आवेश की बिजली चमकाता है और ज़रूरत पड़ने पर आँसुओं का जल।

"मित्रो, अपने दल के प्रोग्राम के बारे में मैं आप लोगों से दलील नहीं करना चाहता। तुममें से हरएक अपने दिल में जानता है कि हम शक्ति मिलने पर क्या-क्या करेंगे।" यह कहकर वह अपने भाषणों से दलील की ज़रूरत को बाहर निकालकर फेंक देता है।

"याद रक्खो, तुम संसार की सबसे शिरमौर जाति के लोग

हो। भगवान् ने भूमंडल पर हुकूमत करने के लिए जिस जाति की रचना की वह तुम्हारी ही जाति तो है। तुम्हें क्या करना चाहिए ? अगर मेरी आज्ञाओं को बिना किसी प्रकार का हीला-हवाला किये मानोगे तो यक़ीन रक्खो कि जिस तरह कल सूरज का निकलना ज़रूरी है उसी तरह जर्मन-जाति की तरक़्क़ी भी ज़रूर होगी।"

जवानों के दिलों में उमंगें हिलोरें मारने लगीं। श्रोताओं के दिल उत्साह से फूले न समाये! जो बूढ़े कई महीनों से मुस्कराये तक न थे उनके चेहरे चमक उठे। यही वह सुनना चाहते थे। यही उन्होंने सुना। हिटलर सचमुच उनका मसीहा है! उन्हें विश्वास हो गया।

सालों तक रोज़-ब-रोज़ रात के वक़् यही होता रहा। इससे पहले किसी और ने इस तरह सर्वसाधारण से अपील न की थी। हिटलर जानता है कि जमात के अन्दर प्रत्येक व्यक्ति अपनी गिरह की सोच-विचार करने की शक्ति को सामूहिक आवेशपूर्ण भावना में मिला देता है। आश्चर्य की बात तो यह है कि जिन जर्मनों के बल पर हिटलर नाज़ीदल की इमारत खड़ी कर रहा था उन्हें ही उसी ने अपनी पुस्तक में "बेसमझ भेड़-बकरियों का विशाल रेवड़" का नाम दिया है। बलिहारी!

नाज़ीदल के जल्सों में जो व्यक्ति जो कुछ सुनने की ग़रज़ से आता था—यहूदियों को छोड़कर—उसे वही सुनने को मिलता था। जिसको जिस चीज़ की ज़रूरत थी, वही चीज़ उसे दिये जाने का वादा

किया जाता था। हरएक के लिए उसके पास हरएक चीज़ मौजूद थी। अमीरों से वादा किया गया कि उन्हें नाज़ी-युग में लाभ घना होगा और मज़दूरी कम देनी पड़ेगी। ग़रीबों को उसने आशा दिलाई कि समाजवादी ढंग से सम्पत्ति का बँटवारा हो जायगा! ज़मींदारों से कहा गया कि नाज़ी-सरकार उनकी जागीरों को सुरक्षित रक्खेगी और अनाज पर चुंगी बढ़ा दी जायगी। ग़रीब किसानों को बतलाया गया कि उन्हें पैदावार बढ़ाने के लिए सस्ते दामों का खाद (फ़र्टीलाइज़र) मिलेगा और बाहर के देशों से आनेवाले मांस और तरकारियों पर सरकारी कर बढ़ा दिया जायगा। मज़दूरों को खेत और रहने के लिए अच्छे मकान मिलेंगे। बेकारों को नौकरी दी जायगी। अविवाहिता स्त्रियों को पति मिलेंगे और पुरुषों को पत्नियाँ। पुरानी बातें सब बदल जायँगी—मुसीबतें काफ़ूर हो जायँगी। जर्मनी में नये युग की शुरुआत होगी। वर्साई की सन्धि के टूक-टूक कर दिये जायँगे। जर्मनी को बिस्मार्क और फ्रेडरिक के ज़माने की प्रतिष्ठा मिलेगी। यहूदियों के चंगुल से जर्मन-जाति को निकालकर मुक्त कर दिया जायगा। निःशस्त्रीकरण की शर्तों को तोड़कर वह जर्मन-जाति को फिर एक योद्धाओं की—"खून से सोचनेवाली जाति"—बना देगा।

लोगों ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा। सचमुच कोई मसीहा उतर आया!

नाज़ीपार्टी को फ़ौजी रूप देने में भी कोई कसर न उठा रक्खी

गई। इस ज़माने में गई-गुज़री जातियाँ तक आज़ादी चाहती है। जर्मन लोगों का स्वभाव इसके विपरीत है। जर्मन-जाति आज़ादी की भी हामी नहीं है। वह चाहती है कि उस पर हुकूमत की जाय। हिटलर अपने देशवासियों की नस खूब पहचानता था। उसने इस भावना को और भी दृढ़ कर दिया। यहाँ तक कि बर्लिन यूनीवर्सिटी के विद्यार्थी नगर की गलियों में नारे लगाते थे—

"हम आज़ादी पर थूकते हैं।"

प्रोपेगेंडा और प्रचार का हिटलर बड़ा क़ायल है। अपनी पुस्तक में उसने लम्बे-लम्बे दो अध्याय इसी पर लिखे हैं। नाज़ीदल के विकास के लिए प्रोपेगेंडा से ख़ूब काम लिया गया। पार्टी के लिए बड़े पुरअसर नारे बड़े सोच-समझकर तैयार किये जाते थे। कुछ नमूने:—

तीसरा जर्मन साम्राज्य
जर्मनी जाग !
यहूदी को मारो !
शर्म की संधि
डिक्टेटरशिप
जातीय गौरव
ख़ूनी आवाज़
पीठ पर मारो
सिर लुढ़केंगे !

और भी हज़ारों तरकीबों से 'नेता' को लोगों की नज़र में ऊँ

चढ़ाया गया। फ़ौजी अंगरक्षक, फ़ौजी सलाम, अख़बारों में नित्य हिटलर से सम्बन्ध रखनेवाली मनगढ़न्त कथाएँ। एक चित्रों का संग्रह निकला। इसमें एक वर्ष की ही अवस्था से लेकर हिटलर के जीवन के भिन्न-भिन्न कार्य दिखाये गये थे। संग्रह का नाम था— "हिटलर जिस रूप में उसे कोई नहीं जानता।"

और सोचिए तो—नाज़ीदल के जल्से सदा शाम को ही क्यों होते थे?

जब-जब नाज़ी-सभाएँ होती थीं, गाने का इन्तज़ाम ज़रूर होता था। लोगों को बताया जाता था कि पार्टी की कामयाबी में कोई शक नहीं है—वह ज़रूर मिलेगी। इस विश्वास ने नाज़ियों को सफलतापूर्वक अपने दल को बढ़ाने में बड़ा काम दिया। सभाओं में बड़ा सख्त अनुशासन रक्खा जाता था। किसी भी क़िस्म के शोरगुल करनेवाले को कड़ी सज़ा मिलती थी।

ये सब तरीक़े बड़े ज़बरदस्त तरीक़े थे, पर यह समझना भूल होगी कि सिर्फ़ इन्हीं तरीकों के सहारे नाज़ीदल इतनी तरक़्क़ी कर गया। दल के नेताओं ने मेहनत के मारे दिन-रात एक कर दिया। जब सब सोते थे तब नाज़ीदल के नेता जागते थे।

प्रजातंत्र की हत्या

प्रजातंत्र की हत्या

हम पहले ही लिख चुके हैं कि १९१९ में नाज़ीदल के सदस्यों की संख्या केवल सात थी। यह संख्या इस प्रकार बढ़ी—

सन्	१९२० में	इसके सदस्यों	की	संख्या थी	३०००
,,	१९२५ ,,	,,	,,	,,	२७०००
,,	१९२६ ,,	,,	,,	,,	४९०००
,,	१९२७ ,,	,,	,,	,,	७२०००
,,	१९२८ ,,	,,	,,	,,	१०८०००
,,	१९२९ ,,	,,	,,	,,	१७८०००
,,	१९३० ,,	,,	,,	,,	३८९०००
,,	१९३१ ,,	,,	,,	,,	८६२०००
,,	१९३२ (जनवरी),,		,,	,,	९२००००

ये अंक हिटलर के जर्मनी का चांसलर बनने से पहले के है
सन् १९२८ में जर्मन पार्लियामेंट (राइखस्टाग) में नाज़ीयों
के सदस्यों की संख्या सिर्फ़ १२ थी। १९३० में बढ़कर १०७ हो
गई। यह ज़माना आर्थिक संकट का ज़माना था। १९३२ में
हिटलर ने अपनी लोकप्रियता की परीक्षा करनी चाही। वह मार्शल
हिंडनबर्ग के ख़िलाफ़ प्रेज़ीडेन्ट के पद के चुनाव के लिए खड़ा हो
गया। इस चुनाव में हिटलर को ११,०००,००० वोट मिले और
बूढ़े मार्शल को १८,०००,०००। इसी वर्ष उसकी पार्टी के सदस्यों
की संख्या भी २३० हो गई। हिटलर चाहता था कि उसे चांसलर
बना दिया जाय। प्रेज़ीडेन्ट हिंडनबर्ग ऐसा करने को तैयार न थे।
चांसलर के पद पर उन दिनों वान पेपन थे। उन्होंने प्रेज़ीडेन्ट की
आज्ञा से राइखस्टाग सभा को भंग कर दिया और नया चुनाव
हुआ। इसमें नाज़ियों की २,०००,००० वोटों से हार हुई। हिटलर
की आशाओं पर पानी फिर गया। यदि उसके विरोधियों में
परस्पर फूट न होती तो सब समाप्त हो गया होता।

कलियुगी दुर्योधन

अब क्या हो ? हिटलर के सामने यह प्रश्न था। उसने एक
चाल चली। दुर्योधन ने पाण्डवों को लाक्षागृह में भस्म कर
उनका अन्त करने की सोची थी। वह अपने कार्य में असफल
रहा। हिटलर की यह तरकीब कामयाब रही।

२७ फ़रवरी सन् ३३ की रात्रि के समय बर्लिन की राइखस्टाग

की इमारत को लोगों ने धू-धू करके जलता देखा। जान गुन्थर-नामक एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के पत्रकार ने ठीक ही लिखा है कि 'इस अग्निकाण्ड में जर्मन प्रजातंत्र का जो कुछ शेष रह गया था, सब जलकर भस्म हो गया।' हिटलर और उसके दलवालों ने घोषणा की कि यह करतूत कम्यूनिस्टों की है। कम्यूनिस्ट कहते थे हम निर्दोष हैं, यह काम हिटलर और उसके साथियों का है। कम्यूनिस्टों पर जर्मन-अदालतों में मुक़दमा चला। एक डच को इस अपराध का अपराधी क़रार दिया गया और उसे फाँसी दी गई।

इस अग्निकाण्ड में कुछ लाख रुपए की इमारत ही जलकर ख़ाक न हो गई वरन् हिटलर के विरोधियों के इरादे भी इसी में जलकर स्वाहा हो गये। हज़ारों का जीवन इस इमारत के साथ ही बर्बाद हुआ। "राइखस्टाग की आग की लपटों में बिस्मार्क, विलियम द्वितीय के समय का जर्मनी तथा वेमर का शासन-विधान जलकर ख़ाक हुआ और उसके धुएँ से हिटलर का जर्मनी बना।"

यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि राइखस्टाग की विशाल इमारत के अनेक कमरों में आग साथ-साथ लग रही थी। हिटलर और गोरिंग दोनों एक घंटे के अन्दर ही घटनास्थल पर पहुँच गये थे। हिटलर ने अपने मुख से इस घटना को "दैवी पुकार" बताया।

इस तरह आतंक उत्पन्न करके जनमत को कम्यूनिस्टों के ख़िलाफ़ करने में हिटलर सफल हुआ। ५ मार्च को—अग्निकाण्ड के छठे रोज़—नया चुनाव हुआ। जैसी आशा थी हिटलर के दल

को इस चुनाव में अपूर्व सफलता मिली। हिटलर जर्मनी का चांसलर बन गया।

जर्मनी जागा। जागा एक घोर गर्जन-तर्जन करता हुआ। कम्यु निस्टों के १०० नेता—जर्मन-पार्लियामेंट के सदस्य—गिरफ़्तार कर लिये गये। व्यक्तिगत आज़ादी दबा दी गई। मनुष्यों के मकान उनकी रक्षा के स्थान न रहे। पुलिस लोगों की रक्षा न कर सकती थी। हज़ारों निर्दोष व्यक्ति पकड़कर हवालातों में बन्द कर दिये गये। सैकड़ों की सम्पत्तियाँ ज़ब्त हुईं। अख़बारों के मुँह पर मुहीके लगा दिये गये। यह जर्मनी का जागरण था—हिटलरिज़्म की शुरुआत।

शक्ति-संग्रह

सन् १९३३ ई० में शक्ति पाते ही हर हिटलर ख़ुद किस प्रकार सर्वशक्तिमान् बना और किन उपायों से उसने अपने दल को शक्ति शाली बनाया, इसका भी लगे हाथों ज़िक्र कर दें। इस ध्येय की प्राप्ति के लिए जर्मनी में पिछले पाँच-छः वर्षों के अन्दर अनेक उपाय काम में लाये गये हैं। इनमें सबसे पहला क़ानून जो २४ मार्च सन् १९३३ को पास हुआ, वह एनेबलिंग ऐक्ट (Enabling Act) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अनुसार 'राइख' के मंत्रिमंडल को क़ानून बनाने का अधिकार प्राप्त हो गया। इस प्रकार के क़ानून अगर शासन-विधान की सीमा के अन्तर्गत न आते हों, तब भी पास किये जा सकते थे। इन क़ानूनों का समविदा तैयार करने का का

चांसलर को सौंपा गया। इसके अतिरिक्त मंत्रिमंडल को विदेशी राष्ट्रों से संधियाँ आदि करने का भी पूरा अधिकार दे दिया गया। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि २३ मार्च के दिन हिटलर ने अपने एक भाषण में अपनी नीति को प्रकट किया था। उसी नीति के आधार पर उक्त ऐक्ट की धाराओं की रचना हुई। यह पूरा क़ानून 'राइख' ने उसी दिन पास कर दिया और अगले ही रोज़ से उस पर अमल भी होने लगा।

हिटलर को अपने देश में जो शक्ति प्राप्त हुई, उसमें इस 'ऐक्ट' (Enabling Act) का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा क़ानून बनाने का कार्य 'राइखस्टाग' और राइखराट से हटकर मन्त्रि-मंडल के हाथों में आ गया। बजट को छोड़कर और सब प्रकार के कार्यों का निबटारा मन्त्रिमण्डल द्वारा ही किया जा सकता था। विधान की आज्ञाओं के विरुद्ध भी इस प्रकार के क़ानून बनाये जा सकते थे। इस प्रकार के सब क़ानूनों का रचना-कार्य मंत्रिमंडल की ओर से चांसलर के हाथ में था। इसका सीधा-सादा अर्थ यह था कि चांसलर पूर्णतया स्थिति का स्वामी था। उसकी शक्ति में केवल एक ही रुकावट पड़ती थी और वह यह कि उक्त ऐक्ट केवल चार वर्ष के लिए लागू किया गया था, अर्थात् ३१ मार्च सन् ३७ तक। चार वर्ष समाप्त होने से पूर्व ही ३१ जनवरी सन् १९३७ को 'राइखस्टाग' ने इस क़ानून की अवधि चार वर्ष के लिए और बढ़ा दी। इस प्रकार जर्मनी में हिटलर की तानाशाही की स्थापना हुई।

जर्मनी भी भारतवर्ष की तरह ही छोटे-छोटे प्रान्तों में बँटा है।

प्रत्येक प्रान्त को 'स्टेट' (State) के नाम से पुकारा जाता है।
हिटलर के शक्तिग्रहण करने से पूर्व इन प्रान्तों में भी अपनी-अपनी
क़ानून बनानेवाली सभाएँ (Diets) थीं । जिस प्रकार केंद्र के

हिटलर और प्रजातंत्र

"इस मूर्खतापूर्ण बात पर हम लोग आँख मूँदकर क्यों विश्वास कर लेते हैं कि संसार की उन्नति केवल बहुमत की संघटित मस्तिष्क-शक्ति द्वारा ही हो सकती है, व्यक्तिविशेष की बुद्धि द्वारा नहीं।"

"बहुमत सदा केवल मूर्खता का ही परिपोषक नहीं रहा है बल्कि कायरतापूर्ण नीति का भी हामी रहा है । जिस प्रकार सौ मूर्ख मिलकर एक विवेकशील विचक्षण व्यक्ति की बराबरी नहीं कर सकते, उसी प्रकार सौ कायरों से एक वीरतापूर्ण विजय की आशा करना भी व्यर्थ है।"

"यह सम्भव हो सकता है कि सुई के बारीक छेद में होकर ऊँट निकल जाय, किन्तु यदि आप चाहें कि चुनाव से योग्य व्यक्ति चुन लें, तो यह असम्भव है—असम्भव।"

("माइन काम्फ़" से)

सरकार ने 'एनेबलिंग ऐक्ट' पास करके 'राइख' की क़ानूनी शक्ति
को छीन लिया, उसी प्रकार प्रांतीय मंत्रिमंडल को भी स्व

रूप से क़ानून बनाने की आज्ञा दे दी गई। फ़र्क़ इतना था कि प्रांतीय मंत्रिमण्डलों को ऐसे क़ानून बनाने का हक़ न था, जो शासनविधान के ख़िलाफ़ जाते हों। हाँ, प्रांत के शासनविधान के ख़िलाफ़ क़ानून बनाने की उन्हें पूरी आज़ादी थी।

७ अप्रैल, सन् १९३३ को एक दूसरा क़ानून प्रांतीय शासन के सम्बन्ध में पास हुआ। इस क़ानून द्वारा प्रांत के शासन पर भी हिटलर का पूरा अधिकार हो गया। प्रत्येक प्रांत के लिए एक 'रीजेण्ट' की नियुक्ति होने लगी। यह रीजेण्ट केवल चांसलर (हिटलर) के प्रति अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी था। उसका कर्तव्य था कि वह यह देखे कि प्रांतों में चांसलर की नीति व्यवहार में लाई जा रही है या नहीं। इस क़ानून से प्रांतों की स्थिति बिलकुल बदल गई। राजनैतिक इकाइयों के स्थान में अब वे भौगोलिक इकाइयाँ ही रह गये। उनका अस्तित्व अब केवल शासन-सम्बन्धी सुविधा के लिए ही था। इस क़ानून के बनने से जर्मनी के अन्दर 'संघ-शासन' (Federalism) का ख़ात्मा हो गया। रीजेण्ट प्रत्येक प्रांत में चांसलर का प्रतिनिधि है। उसे काफ़ी अधिकार मिले होते हैं। वह प्रांत के प्रेज़ीडेण्ट को बरख़ास्त करके उसके स्थान पर किसी दूसरे व्यक्ति की नियुक्ति कर सकता है। मंत्रिमण्डल के सदस्यों के ऊपर भी उसका यह अधिकार है। प्रांत के लिए क़ानूनों की रचना भी वही करता है।

पार्लियामेंटरी देशों में दो व्यवस्थापक सभाएँ रखने की प्रथा है। जर्मनी में भी दो ही थीं—(१) राइखराट और (२) राइख-

स्टाग। 'राइखराट' का स्थान 'अपर हाउस' (Upper House
की तरह था और 'राइखस्टाग' को 'लोअर हाउस' (Lower Hou
की तरह समझना चाहिए। 'राइखराट' के सदस्य प्रांतों (Stat
के प्रतिनिधि होते थे। और उनकी संख्या सब मिलाकर ६८
थी। १४ फ़रवरी, सन् १९३४ के दिन केन्द्रीय सरकार की
से एक विशेष आज्ञा निकाली गई, जिसके अनुसार 'राइखराट'
अन्त कर दिया गया। राइखराट का अन्त हो जाने से प्रांतों
रही-सही स्वतंत्रता पर भी पानी फिर गया।

नाज़ीदल के अतिरिक्त हिटलर और किसी राजनैतिक दल
फूटी आँख भी न देख सकता था। उसका विचार है कि भिन्न
दलों के कारण केन्द्रीय सत्ता दुर्बल हो जाती है। कम्यूनिस्ट
के विरुद्ध अनेक प्रकार के प्रतिबन्ध लगा दिये गये। समाजवा
की शक्ति भी काफ़ी क्षीण कर दी गई, यहाँ तक कि 'एनेबलिंग
के लिए दी जानेवाली कुल १२० वोटों में से ९४ वोटें समाजवा
की ही थीं। प्रजातंत्र दल के ख़िलाफ़ भी क़ानून बनाकर जारी
दिये गये। विभिन्न दलों के ख़िलाफ़ जब इस प्रकार का दमन
देखा गया तो अन्य छोटे-मोटे दल भी या तो अपने आप
गये या 'नेशनल सोशलिस्ट' (नाज़ी) दल में सम्मिलित हो
इतना हो जाने पर भी १४ जुलाई, १९३३ को एक विशेष
जारी किया गया। इसके अनुसार किसी भी प्रकार की नई
को जन्म देना वर्जित कर दिया गया और केवल एक 'ने
सोशलिस्ट' पार्टी को ही जर्मनी की राजनैतिक पार्टी क़रार

गया। इसी क़ानून की एक धारा के अनुसार किसी नवीन पार्टी की रचना करने की कोशिश करनेवाले व्यक्ति को तीन वर्ष के कारागार का दण्ड दिया जा सकता था।

इन सब उपायों और क़ानूनों का नतीजा यह हुआ कि देश में नाज़ीदल सर्वशक्तिमान् हो गया। नाज़ीदल के प्रधान—हर हिटलर—के हाथ में असीम शक्ति आ गई। पार्टी के अन्दर अनुशासन और उसके संगठन को बनाये रखने का कार्य भी हिटलर के ही अधिकार में था। वह पार्टी के किसी भी सदस्य के खिलाफ़ अनुशासन की कार्यवाही कर सकता था। इन सारी बातों का अर्थ होता था—हिटलर की पूरी 'डिक्टेटरशिप'।

रक्त में स्नान

३० जून सन् ३४। यदि मुर्दे उठकर बोल सकते होते तो ७०० ज़बानें उस दिन के रोमांचकारी हत्याकाण्ड का वर्णन आप कह उठतीं। सात सौ? हाँ, सात सौ! *

इन भेड़-बकरी की तरह वध किये जानेवाले लोगों में अर्नस्ट रोह्म का नाम सबसे पहले आता है। शुरू में हिटलर को यदि रोह्म से सहायता न मिलती तो राजनैतिक क्षेत्र में उसका टिकना असम्भव था। उसे हिटलर का राजनैतिक पिता कहना ठीक होगा। नाज़ीदल की प्राइवेट सेना—एस. ए. (S. A.)—का वही कमान था। जब तक रोह्म से हिटलर का काम निकलता रहा तब तक

* कुछ लोगों ने इस संख्या को १,१७६ बताया है।

दोनों में दाँतकाटी रोटी रही। जब वह चांसलरी के पद पर पहुँच गया तो हिटलर को रोह्म से अपने विरुद्ध किये जानेवाले षड्यन्त्रों की बू आने लगी। यह स्वाभाविक ही था। अब रोह्म और एस. ए. की भूरी कुर्तीवाले सैनिकों का दल उसकी आँख की किरकिरी हो गया। वह इनका अंत करने की चिंता में रहने लगा। रोह्म के क़ाबू में ३५ लाख सैनिकों की जनशक्ति थी। यदि वह इस शक्ति को हिटलर के खिलाफ़ काम में लाने लगता तो ?

एक बात और भी थी। नाज़ीदल—उस वक़्त के नाज़ीदल—में सब लोग एक ही मत के न थे। जो लोग इसमें आकर शामिल हुए थे उनके शामिल होने के कारण एक-से थे, हालाँकि सबका लक्ष्य एक ही था। यह बात भी अब हिटलर के लिए असहनीय हो रही थी। क्यों न वह ऐसे सब लोगों को ख़तम कर दे जो उसके स्वर में स्वर मिलाकर न बोलें ?

३० जून के हत्याकाण्ड के पीछे यही दो कारण थे।

इस प्रकार के जो हत्याकाण्ड होते हैं, उनकी शुमार मुश्किल हो जाती है। क्यों ? एक देहाती मसल मशहूर है—राजा हो चोरी करे, न्याय कौन घर जाय ? पुलिस, जो मरे हुए लोगों का पता लगाती है, जब ख़ुद मारनेवालों के हाथ में हो तो पता लग ही कैसे सकता है ? तब क्या आश्चर्य है कि हिटलर ने ७०० के स्थान में केवल ७७ को गोली का शिकार बना हुआ बतलाया।



कप्तान रोह्म

जिसका हिटलर की आज्ञा से ३० जून सन् १९३४ को वध किया गया था ।

मारे जानेवालों में भिन्न-भिन्न दलों के लोग थे। पहले एस. ए. (S. A.) के मुख्य सैनिकों तथा नेताओं को लीजिए:—

कप्तान अर्नस्ट रोह्म राइखस्टाग का मन्त्री और एस. ए. (S. A.) सेना का सरदार, हिटलर का गाढ़ा दोस्त।

कार्ल अर्नस्ट, एस. ए. का एक दूसरा सरदार।

इसी सेना के तीन मेजर जनरल—एडमंड हीनेज़, सीलीशिया का स्वामी; म्यूनिक का पुलिस प्रेज़ीडेन्ट और फ्रिज़ वान क्रोसर।

हेन्सहेन और कुछ दूसरे जनरल।

कर्नल उहल—हिटलर का कहना था कि इसी व्यक्ति को उसे मार देने के लिए नियुक्त किया गया था।

दूसरा दल कैथोलिक लोगों का था। इसमें वे लोग थे जो वाइस चांसलर वान पेपन के प्रभाव में थे। इसमें विशेष उल्लेखनीय हैं—

डाक्टर एरिश क्लोसनर—एक प्रसिद्ध नेता।

एडलवर्ट प्रोस्ट—कैथोलिक युवक आन्दोलन का नेता।

फ्रिज़वान बोस—पेपन का राजमंत्री।

एडगर जून—पेपन का प्राइवेट सेक्रेटरी।

डाक्टर बेक—विद्यार्थियों की एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था का नेता।

तीसरा दल उन लोगों का था जिनसे कुछ निजी बिगाड़ था—

जार्ज स्ट्रेसर—नाज़ीदल की नीति निर्धारित करनेवाला एक विद्वान् पुरुष—पहले हिटलर का दायाँ हाथ—बाद में राजनीति से अलग हो गया था।

जनरल वान कार—बवेरिया का १९२३ का डिक्टेटर।

चौथे दल के मुख्य लोगों में थे:—

हिटलर से पहले का जर्मनी का चांसलर ।

उसकी पत्नी ।

जनरल वान ब्रीडो—उक्त चांसलर का एक सहायक ।

भगवान् इन लोगों की आत्माओं को शान्ति दे !

इन लोगों को क्यों मारा गया ? एक जर्मन राष्ट्रीयतावादी मुख से सुनिए:—

"जर्मनी के उपनिवेश वर्साई की संधि से छिन गये । रोह्म-जै नेताओं को, जिनका देश में रहना सरकार की नज़र में खतरना हो गया था, प्राय: इन दूर स्थित उपनिवेशों में भेज दिया जाता है चूँकि जर्मनी के पास इस क़िस्म के कोई उपनिवेश थे ही नहीं, इसलि सिवा ऐसे लोगों का वध कर दिया जाय और चारा ही क्या था !

एस. ए. सेना का नायक रोह्म बड़े हौसले का आदमी था वह अकेला ही गोरिंग और गोएबल दोनों के बराबर था । प्रबन्ध और संगठित करने की क्षमता में जर्मनी भर में उसके मुक़ाबले कोई दूसरा न था । उस समय भूरी कुर्त्ती के सैनिकों में लोक प्रियता के नाते हिटलर के बाद उसी का नम्बर था । हिटलर प किसी और के इतने एहसान न थे, जितने कि रोह्म के ।

जर्मनी के प्रसिद्ध नगरों में हिटलर-विरोधियों की पकड़-धक शुरू होते ही रात्रि के समय किसी ने कप्तान रोह्म के दरवाज़े प आवाज़ लगाई:—

"दरवाज़ा खोलो ।"

"अच्छा, पर तुम हो कौन ?" नींद से जागकर कप्तान रोह्म ने कहा।

"मैं हिटलर हूँ। अन्दर आने दो।"

"क्या ! तुम आ गये ? मैं तो समझता था कि तुम दोपहर से पहले न आ सकोगे"—और रोह्म ने दरवाज़ा खोल दिया।

हिटलर की ओर से गालियों की वर्षा शुरू हुई। रोह्म भी दबनेवाला न था। उसने भी ईंट का जवाब पत्थर से दिया। अगले चन्द ही मिनटों में हिटलर का इशारा पाते ही रोह्म को हथकड़ियाँ....।

रोह्म से कहा गया कि वह खुद ही गोली मारकर आत्महत्या कर ले। उसने ऐसा करने से इनकार कर दिया और कहा—"अगर कोई मुझे गोली मारे तो वह खुद अडोल्फ़ ही हो।" जेल के कर्मचारी हिटलर के पास रोह्म के आत्महत्या करने से इनकार करने का समाचार लाते थे। निदान हिटलर ने रोह्म के वध की आज्ञा दी। पहली जुलाई के दिन रोह्म को जेल के अन्दर गोली मार दी गई। इस प्रकार अपने घनिष्ठ मित्र को हिटलर ने ख़तम किया। वध किये जानेवालों में से रोह्म ही एक ऐसा व्यक्ति था जिसकी हत्या कराने में हिटलर को इतना सोच-विचार करना पड़ा—आगा-पीछा सोचना पड़ा। और लोगों में से अनेकों को तो हिटलर के साथियों ने उसकी आज्ञा पाकर समाप्त कर डाला। गोरिंग ने अपने हाथ इन लोगों के ख़ून से खूब रँगे। म्यूनिक और उसके आसपास के नगरों में हिटलर ने खुद इस काण्ड का चार्ज ले रक्खा था। बर्लिन को जनरल गोरिंग भेजे गये थे।

गोरिंग को हिटलर की जो आज्ञाएँ मिली थीं वह निहायत ही अस्पष्ट थीं—गोरिंग को काफ़ी छूट थी।

उसने अपनी मनमानी की, यहाँ तक कि मृत लोगों में से ऐसे बहुत थे जिनके बारे में हिटलर को यह भी न मालूम था कि वह जीते हैं या मर गये। कहा जाता है कि एक बार किसी विदेशी ने हिटलर से एक प्रीतिभोज के मौक़े पर उसके किसी मित्र के बारे में पूछा। किन्तु पास ही में जो एक दूसरा नाज़ी मौजूद था उसने कहा कि '३० जून के दिन वह भी ग़ायब हुआ।' यह जानकर हिटलर को बड़ा आश्चर्य हुआ!

३० जून को मारे जानेवाले बहुत-से युवकों के माता-पिताओं को अपने पुत्रों के वध की ख़बर तब हुई जब उनके पास उन लोगों की राख के पार्सल पहुँचे!

जिन लोगों को उस दिन नाज़ियों की गोली का शिकार बनना पड़ा था, उनको इस बात की ज़रा भी शंका न थी कि मौत इतनी नज़दीक है। उनके साधारण जीवन का क्रम बराबर चल रहा था। भूतपूर्व चांसलर और उसकी पत्नी का वध उनके घर में जाकर किया गया। वह बिल्कुल बेख़बर था—बिल्कुल बेख़बर। बेचारा टेलीफ़ोन पर किसी से बातचीत कर रहा था। जब सरकारी सैनिक उसके मकान में दाख़िल हुए तो उसने टेलीफ़ोन में कहा—"एक क्षणभर के लिए क्षमा चाहता हूँ; कोई साहब कहीं से तशरीफ़ लाये हैं।"

वह क्षण लौटकर न आ सका। 'कहीं से तशरीफ़ लानेवाले

साहब' साक्षात् यम के दूत थे। रिवालवर से गोली निकली और जर्मनी के हिटलर से पहले के चांसलर का काम तमाम हो गया। चांसलर की पत्नी गोलियों की आवाज़ सुनकर एक दूसरे कमरे में शरण लेने को दौड़ी। शरण कहाँ? अगली गोली उसके भी लगी। वह भूमि पर गिर पड़ी और फिर न उठी।

सरकारी सेना, जिसने इस हत्याकांड में लोगों को वध करने का कार्य किया, दो हिस्सों में बाँट दी गई थी। एक हिस्से का काम था गोली चलाना और दूसरे का काम था लोगों को फाँसी देना। फाँसी देने से पहले एक मिनट में सबका कोर्ट मार्शल ख़तम हो गया। एक-एक आदमी का नाम पुकारा जाता था और फाँसी देने-वाला अफ़सर अपनी ज़बान से यह शब्द कहता था—

'तुम विश्वासघात के दोषी हो, तुम्हें मौत की सज़ा दी जाती है।'

एस. ए. (S. A.) सेना के अनेक नेताओं के होठों पर मृत्यु का आलिंगन करते समय 'हाइल हिटलर' (हिटलर की जय हो !)— यह शब्द थे। वह समझे हुए थे कि सेना ने हिटलर के विरुद्ध विद्रोह किया है। स्वामिभक्ति के अपराध में उन लोगों को हिटलर और नाज़ीदल के प्रति भक्ति होने के कारण उन्हें मौत के घाट उतारा जा रहा है। यह कैसा विचित्र विश्वासघात था!

हिन्दुओं में किसी के मरने पर १३ वें दिन उसकी तेरहवीं की जाती है। १ जुलाई से लेकर १३ जुलाई तक हिटलर भी अपने इस जघन्य पाप से पीड़ित—यदि 'पीड़ित' शब्द का प्रयोग उचित हो तो—रहा। पहले बताया गया कि भूतपूर्व चांसलर और उसकी

पत्नी का वध किया गया है। प्रचार-विभाग ने मरनेवालों की अनेक चारित्रिक दुर्बलताओं को खोद-खोदकर ढूँढ़ निकाला।

१३ जुलाई को हिटलर का भाषण हुआ। जहाँ पहले दो का ही मारा जाना क़बूल किया जा रहा था वहाँ अब उसने अपनी ज़बान से ७७ का वध किया जाना स्वीकार किया। उस दिन वह बहुत ही पस्त-हिम्मत दिखाई देता था। उसके भाषण को राइखस्टाग के मेम्बरों ने निस्तब्ध होकर सुना। राइख के ३० सदस्यों की सीटें सूनी पड़ी थीं।

भाषण में हिटलर ने पहले तो नाज़ीदल की क्रांति के इतिहास का बखान किया; तत्पश्चात् कप्तान रोह्म से अपने मतभेद का वर्णन। षड्यन्त्र के विषय में उसने भूतपूर्व चांसलर का ज़िक्र करते हुए बतलाया कि उसने कुछ ही दिन पूर्व एक विदेशी राजनीतिज्ञ से मुलाक़ात की थी। इस विषय में उसके शब्द थे—

"यदि कोई जर्मन इस तरह कभी किसी विदेशी राजनीतिज्ञ से मिलेगा तो उसको इसी तरह गोली का निशाना बनाया जायगा—चाहे उस मुलाक़ात में मृतु और प्राचीन सिक्कों के बारे में ही बातचीत क्यों न हुई हो।"

अपने इस भाषण का उसने आवेश से भरे हुए इन शब्दों द्वारा अंत किया—

"२४ घंटे तक जर्मनी के अन्दर मैं ही सबसे बड़ी अदालत रहा।"

कुछ नेता लोग, जिनका भाग्य ने साथ दिया, उस दिन हिटलर

के चंगुल से बच गये। ट्रेवीरेनस नाम के नेता की अपनी जान को हथेली पर रखकर भाग जाने की कहानी भी उतनी ही असाधारण है जितनी कि ३० जून के क़त्लों की।

ट्रेवीरेनस सन् १४ की लड़ाई में समुद्री सेना के एक अफ़सर के पद पर रह चुका था। बाद में वह मंत्रिमंडल का सदस्य भी रहा था। उसका नाम भी मौत के घाट उतारे जानेवालों की सूची में था, क्योंकि (१) उसका सैनिकों पर काफ़ी प्रभाव था। (२) वह हिटलर से घृणा करता था और इस बात को छिपाता न था।

३० जून के 'काले दिन' की सन्ध्या के समय वह अपने मकान के पीछेवाले मैदान में टेनिस खेल रहा था। सरकारी सैनिकों से भरी हुई एक लारी उसके मकान के सामने आकर रुकी। ट्रेवीरेनस का एक बच्चा इन लोगों को मिला। उन्होंने पूछा—

"ट्रेवीरेनस कहाँ है ?"

"मैं यह रहा"—ऊपरवाले कमरे के बरंडे से एक आवाज़ आई।

सैनिक धम-धम करते हुए तुरन्त ऊपर पहुँचे। पर वह व्यक्ति तो ट्रेवीरेनस का पिता था। उन्हें अपनी भूल मालूम हुई और उन्होंने उस बूढ़े से उसके बेटे का पता पूछा। इतनी ही देर में फुर्तीला और तुरत बुद्धिवाला लड़का दौड़कर अपने पिता के पास पहुँच गया था और उससे सारा भेद कह दिया था। बग़ीचे के चहारदीवारी के दूसरी तरफ़ ट्रेवीरेनस की मोटर खड़ी थी। वह तुरन्त दीवार फलाँग कर मोटर में जा कूदा। सैनिकों ने आश्चर्य से उसकी

मोटर को जाते हुए देखा। लारी से फ़ायर भी किया गया। प[र]
निशाना चूक गया। वे भी झटपट लारी में सवार होकर उसका
पीछा करने को दौड़े।

ट्रेवीरेनस ने बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया। उसने जंगल की
ओर न जाकर शहर के बीच को मोटर सीधी कर दी। सैनिकों की
लारी भी पीछे-पीछे दौड़ी चली आ रही थी। यह लोग गोली न
दाग सकते थे, क्योंकि नगर की गलियों में और सड़कों पर आने
जानेवालों की काफ़ी भीड़ थी। ट्रेवीरेनस की मोटर देखते-देखते
लापता हो गई।

नगर के भीतरी भाग में ट्रेवीरेनस अपने एक मित्र के घर पहुँचा।
उसने भेष बदला और वह यह जानने के लिए कि आखिर मामला
क्या है, भूतपूर्व चांसलर के घर पहुँचा। उसके द्वार पर लोगों की
एक अच्छी भीड़ जमा थी। जो सैनिक वहाँ मौजूद थे उनमें से एक
से अपनी मोटर से उतरकर उसने पूछा कि क्या हो गया। उत्तर में
उसने सुना कि चांसलर और उसकी पत्नी दोनों मारे गये। वह
उल्टे पैरों लौटा और फिर मोटर में बैठकर जंगल की ओर निकल
गया। वहीं जाकर उसने जानबूझकर अपनी मोटर को टकरा
दिया। उसे वहाँ टूटी-फूटी दशा में छोड़कर वह फिर बर्लिन में
अपने उसी मित्र के यहाँ आ गया। वहाँ आकर वह मैकाले लिखित
"इंगलैंड का इतिहास" पढ़-पढ़कर अपने दिन काटता रहा!

हिंडनबर्ग का अन्त

२ अगस्त सन् ३४ को हिंडनबर्ग की मृत्यु हो गई। ३० [जू]

के रक्तपात ने बूढ़े हिंडनबर्ग के ढाँचे को हिला डाला। मार्शल हिंडनबर्ग सन् २५ से लेकर ही जर्मन-राष्ट्र का प्रेज़ीडेन्ट रहा था। ऐसा अपूर्व, भयानक हत्याकाण्ड न उसने कभी देखा था और न शायद सुना ही होगा। हिंडनबर्ग की आत्मा मानों हिटलर से कह रही थी—

'हमारे दौरे में पुन मगन थे, तुम्हारे दौरे में पाप खुश हैं।'

प्रेज़ीडेन्ट हिंडनबर्ग की मृत्यु से जर्मनी में हर जगह यह तीन प्रश्न पूछे जा रहे थे—अब क्या होगा? क्या हिटलर प्रेज़ीडेन्ट भी खुद ही बन जायगा? यदि वह अपने आप प्रेज़ीडेन्ट भी बन जाता है तो फिर चांसलर कौन होगा?

इन प्रश्नों का उत्तर जर्मन लोगों को हिटलर की उसी दिन-वाली उस घोषणा में मिल गया, जिसमें उसने प्रेज़ीडेन्ट और चांसलर के पद को मिलाकर एक कर दिया। ऐसा होगा, इसकी लोगों को स्वप्न में भी आशा न थी। न हो, इससे ग़रज़?

जिस दिन हिंडनबर्ग की मृत्यु हुई उसी दिन प्रातःकाल के समय सरकारी सेना की क़तारें की क़तारें मैदान में बुलाई गईं। सबको शपथ लेनी थी। नई—बिल्कुल नई क़िस्म की शपथ—जर्मन-राष्ट्र या जर्मन-राष्ट्रपति के प्रति स्वामिभक्ति की नहीं, बल्कि हर हिटलर की ज़ात के प्रति——

"मैं ईश्वर की क़सम खाकर यह पवित्र शपथ लेता हूँ और प्रतिज्ञा करता हूँ कि जर्मन राइख तथा जर्मन-जाति के नेता और जर्मन-सेना के अध्यक्ष हर हिटलर की आज्ञाओं का बिना किसी प्रकार

की हीलो-हुज्जत के पालन करता रहूँगा। एक बहादुर सिपाही
तरह मैं अपनी इस शपथ का पालन करने के लिए अपनी जा
तक देने को हमेशा तैयार रहूँगा।"

हरएक सैनिक और अफ़सर ने हाथ उठाकर यह शपथ ली
कुछ अफ़सर लोगों ने, जिन्हें हिटलर से घृणा थी, उस दिन बीमा
का बहाना लेकर छुट्टी ले ली। जब वह लौटकर आये तो उन्हें
यही शपथ लेने को मजबूर किया गया।

जब शपथ लेने की क्रिया समाप्त हो चुकी तो सब लोगों
राष्ट्रीय गीत की जगह नाज़ीदल का गीत गाया।

हिंडनबर्ग के जीवन में कभी ऐसा मौक़ा आ सकता था कि
हिटलर को चांसलर के पद से हटा देता। उसकी मृत्यु से हिट
का मार्ग बिल्कुल साफ़ हो गया। वह जर्मन-राष्ट्र का स्वामी थ
अपने आपको अपने पद से वह खुद ही हटा सकता था। ई
को छोड़कर अब कोई उसे इस पद से हटानेवाला न था। अ
ईश्वर ? हिटलर का कहना था कि वह उसके वश में था। श
पाकर कौन अन्धा नहीं हो जाता—

'को न मान मद व्यापेहु जेही'

"यहूदी को मारो"

श्री जगद्गुरु विश्वाराध्य सिंहासन
ज्ञानमंदिरम्
जंगमवाड़ी मठ काशी

श्री जगद्गुरु विश्वाराध्य सिंहासन
ज्ञानमंदिरम्
जंगमवाड़ी मठ काशी

"यहूदी को मारो"

"यहूदियों का वध करने में मैं अपने 'प्रभु' का कार्य कर रहा हूँ।"

—हर हिटलर

एक कहानी

जर्मनी के किसी पहाड़ी प्रदेश में कोई आदमी मोटर द्वारा यात्रा कर रहा था। ऊबड़-खाबड़ रास्ता होने से पहाड़ी की किसी चट्टान से टकराकर मोटर उलट गई और यात्री महाशय लुढ़कते हुए नीचे को चले। इस घटनास्थल से थोड़ी ही दूर पर दो चरवाहे लड़के अपनी भेड़ें चरा रहे थे। उन्होंने जो एक आदमी को लुढ़कते-पुढ़कते नीचे की ओर आते देखा तो झट दौड़ पड़े और जल्दी से एक पत्थर का टुकड़ा उठाकर लुढ़कनेवाले व्यक्ति के मार्ग में लगा

दिया। वह रुक गया। थोड़ी देर में जब उसे होश आया तो वह दो लड़कों से बोला—

"हम तुम्हारे इस कार्य से बहुत खुश हैं। तुमने हमारी बचाई। तुम हमसे जो चाहो माँग सकते हो, हम तुम्हें वही देंगे"

"आप कौन हैं ?"

"जर्मनी के स्वामी हर हिटलर।"

दोनों लड़के गिड़गिड़ाकर हाथ जोड़कर बोले—

"आप हिटलर हैं तो आपका हम दोनों पर यही सबसे एहसान होगा कि आप हमारे माता-पिता को इस बात की खबर दें कि हमने आपकी जान बचाई, वर्ना वे हमें मार ही डालेंगे"

ये बच्चे यहूदी थे।

× × ×

हिटलर किसी ऐसे नाटक को भी न देखेगा जो किसी लेखक का लिखा हुआ हो। यहूदियों के प्रति उसके हृदय में शत्रुता क्यों है ? वह उनकी जाति का इतना कट्टर विरोधी क्यों

कहा जाता है कि वह बचपन में एक धनी परिवार की लड़की से प्रेम करने लगा था। वह लड़की भी उसे थोड़ा चाहती होगी। कुछ दिन बाद हिटलर ने उस युवती से विवाह प्रस्ताव किया। लड़की ने अपने माता-पिता की अनुमति चाही। उसके माँ-बाप इस प्रस्ताव को सुनकर बुरी तरह बिगड़े एक मोची का लड़का इतने बड़े परिवार की लड़की से विवाह का साहस कर सकता है। उन्होंने अपनी लड़की को फिर हि

से मिलने-मिलाने से भी रोक लिया। हिटलर अपमानित हुआ। तभी से उसके दिल में यहूदियों की समस्त जाति के लिए क्रोध और घृणा भरी हुई है। इसी के कारण उसने यहूदियों से बदला लेने में कोई कसर नहीं छोड़ी।

यहूदी की लड़की से प्रेम का यह क़िस्सा झूठा हो या सच्चा, पर यह ज़रूर कहा जा सकता है कि उसका अपने जीवन की शुरुआत में ही किसी यहूदी-परिवार से सम्बन्ध ज़रूर रहा होगा। वहीं कुछ घटनाएँ ऐसी घटी होंगी, जिन्होंने उसे एकदम उनकी जाति का कट्टर शत्रु बना दिया।

नाज़ीदल के हाथ में शक्ति आते ही जर्मनी में यहूदियों के ऊपर अत्याचार होना प्रारम्भ हुआ। नाज़ीदल और उसके नेताओं को यहूदियों से बड़ी घृणा थी। बात यह थी कि व्यापार, विज्ञान तथा कला आदि में यहूदी लोग जर्मनों से पहले ही बाज़ी मार ले गये थे। जर्मनी के अनेक बड़े-बड़े बैंक उनके हाथ में थे, कई बड़े-बड़े अख़बारों पर उनका अधिकार था और देश के सामाजिक जीवन में भी उनका बड़ा प्रभाव था। क्रान्ति होने के बाद यहूदियों ने राजनैतिक और शासन-सम्बन्धी क्षेत्रों में भी काफ़ी उन्नति की। फल यह हुआ कि अनेक उत्तरदायी पदों पर यहूदी लोग पहुँच गये। युद्ध के बाद की जर्मनी की राजनैतिक हलचल में कई यहूदी जर्मनी के नेता बन गये।

यहूदियों की इस उन्नति को—उनके इस बढ़ते हुए प्रभाव को—नाज़ीदल के नेता ठंडे कलेजे से कैसे देख सकते थे? यहूदी लोग

नाज़ियों की नज़र में बुरी तरह खटकने लगे। यह सच है कि धनी लोगों का वर्ग होने के कारण जर्मनी की ग़रीब जनता—विशेष कर किसानों—के हृदय में यहूदियों के विरुद्ध असंतोष के भाव पहले से ही मौजूद थे। किन्तु हिटलर और उसके दल ने इस यहूदी-विरोधी भावना को अनेक प्रकार का रंग देकर उत्तेजना के शिखर पर पहुँचा दिया। सब प्रकार के दोष यहूदियों में दिखलाये जाने लगे। जर्मनी की तत्कालीन गिरी हुई दशा की ज़िम्मेदारी भी यहूदियों के ही मत्थे मढ़ी गई, यहाँ तक कि महायुद्ध में जर्मनी की हार का कारण भी जर्मनी में 'यहूदियों का होना' ही बताया गया। नाज़ीदल की ओर से इस बात की दुहाई दी जाने लगी कि "जर्मनी की अवनति इसलिए है कि वह "ओछे विदेशियों" (यहूदियों) के हाथों में पड़ा हुआ है। अगर जर्मनी को उन्नति करनी है—आगे बढ़ना है—तो उसे चाहिए कि सबसे पहले यहूदियों का नामोनिशान मिटा दे।" यह कहने की आवश्यकता नहीं कि 'जर्मनी की उन्नति' का अर्थ था—नाज़ीदल की उन्नति। इस लगातार चलनेवाले आन्दोलन का परिणाम यह हुआ कि जर्मनी भर में एक स्वर गूँजने लगा और वह स्वर था—

"जर्मनी जाग और यहूदियों को बर्बाद कर दे।"

क्या नाज़ीदल के जल्सों में, क्या समाचारपत्रों में, यहीं तक नहीं, गलियों और बाज़ारों तक में, जर्मनी में यहूदियों के विरुद्ध एक भयानक तूफ़ान-सा आ गया। सार्वजनिक स्थानों में यहूदियों के विरुद्ध गीत गाये जाने लगे। ऐसे अनेक गीतों की रचना की

गई। नाज़ीदल की ओर से राष्ट्रीय गानों की जो पुस्तकें प्रकाशित कराई गईं, उनमें यहूदियों के विरोधी गाने भरे रहते थे। इसी प्रकार की एक पुस्तक की चार पंक्तियाँ ये हैं—

"So stand the storm battalions,
Ready for racial fight:
Only when Jews lie bleeding,
Can we be really free."

इन पंक्तियों में जर्मन-जाति को यहूदियों के विरुद्ध शस्त्र उठाने को उत्तेजित किया गया है। पिछली दो पंक्तियों का अर्थ है—"हम (जर्मन) सच्ची आज़ादी यहूदियों का खून बहाकर ही प्राप्त कर सकते हैं।"

एक अर्द्ध-सरकारी पत्र में यहूदियों के विरुद्ध निकला—

"जर्मन नेशनल कामरेड * क्या तुम्हें मालूम है कि जर्मनी में बसे हुए प्रत्येक यहूदी के कारण—

तुम्हारे बच्चे के अधिकारों पर कुठाराघात होता है।
तुम्हारी पत्नी की प्रतिष्ठा को धब्बा लगता है।
तुम्हारी बहन की प्रतिष्ठा को धब्बा लगता है।
तुम्हारी प्रेयसी की प्रतिष्ठा को धब्बा लगता है।
तुम्हारे माता-पिता का वध होता है।
तुम्हारी सम्पत्ति की चोरी होती है।
तुम्हारी प्रतिष्ठा की हँसी उड़ाई जाती है।

---

* नाज़ीदल की ओर से जर्मनी के नागरिकों को इसी प्रकार सम्बोधित किया जाता था।

तुम्हारे चरित्र को घृणा की नज़र से देखा जाता है।
तुम्हारे धार्मिक विचारों में अपवित्रता आती है।
तुम्हारी सभ्यता का नाश होता है।
तुम्हारी जाति में विनाशकारी कीटाणु फैलते हैं।"

बड़े-से-बड़े और छोटे-से-छोटे नाज़ीदल के नेताओं ने यहूदि के विरुद्ध उत्तेजना फैलाने में कुछ कसर न रक्खी। हिटलर ने कि प्रकार यहूदियों के वध को "प्रभु (Lord) का कार्य" समझ था, इसका हम शुरू में ही वर्णन कर चुके हैं। यहूदियों के प्र जर्मन-नेताओं के विचारों को स्पष्ट करने के लिए डॉक्टर गोबेल (जर्मनी के प्रचार-मन्त्री) की इन पंक्तियों पर ध्यान दीजिए—

"एक यहूदी को देखनेमात्र से ही मुझे नफ़रत है। जब मैं कि यहूदी को देख लेता हूँ तो मुझे सचमुच क़ै हो जाती है।........ए साधारण वेश्या को मैं विवाहित यहूदी-स्त्री की अपेक्षा ऊँची नज़ से देखता हूँ।"

जब यहूदियों के विरुद्ध इतना ज़बरदस्त आंदोलन था तो उनके साथ हिटलर की सरकार का क्या सलूक हो सकता था, इसक अनुमान सहज में ही किया जा सकता है। नाज़ी-सरकार की ओ से सर्वत्र यहूदियों के बहिष्कार की घोषणा की गई। सरकारी पद पर से उन्हें हटा दिया गया। वकील, डॉक्टर, प्रोफ़ेसर, व्यापारी—ज भी कोई यहूदी जहाँ कहीं था, हटा दिया गया। यहूदियों क दूकानों से माल न लेने के नारे लगाये गये। स्वस्तिक चिह्न लगाये हुए सन्तरी यहूदियों की दूकानों पर तैनात किये गये, जो ग्र

लोगों के नाम नोट करते थे, जो कि उन दूकानों से माल खरीदने आते थे। ऐसे लोगों का बाद में सामाजिक बहिष्कार होता था। हिटलर जर्मन-जाति को विशुद्ध आर्य-जाति के रूप में देखना चाहता था। अतः थोड़े दिनों बाद यह आज्ञा निकाली गई कि न कोई जर्मन-स्त्री किसी यहूदी से शादी करे और न कोई जर्मन-पुरुष किसी यहूदी स्त्री से। जर्मनी के अन्दर बसे हुए यहूदियों को नागरिकता के अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया। जो लोग सरकारी नौकरी में थे, उन्हें आज्ञा हुई कि वे अपने वंश तथा सम्बन्धियों का पूरा-पूरा विवरण दाखिल करें। जिन लोगों के आर्य होने में ज़रा भी सन्देह हो सकता था, उनको निम्नलिखित शपथ लेनी पड़ती थी——

"मैं शपथपूर्वक इस बात की तसदीक़ करता हूँ कि भली भाँति छानबीन करने पर मुझे किसी भी ऐसी बात का पता नहीं है, जिससे मेरे आर्य होने में कोई भी सन्देह किया जा सके। मेरे वंशज किसी समय भी यहूदी-धर्म के अनुयायी नहीं रहे। मुझे इस बात का पता है कि यदि मेरा यह कथन असत्य हुआ तो मुझ पर क़ानून के अनुसार मुक़दमा चलाया जायगा और मैं नौकरी से बर्ख़ास्त कर दिया जाऊँगा।"

यहूदी ही क्या, किसी भी क़ौम का इन क़ानूनों, प्रतिबन्धों तथा अत्याचारों के सामने टिकना कठिन था। यहूदियों ने लुट जाने के डर के मारे अपनी-अपनी दूकानें बन्द कर दीं, बैंकों में ताला लगा दिया और जिसको जहाँ शरण मिली, वहीं वह जर्मनी को

छोड़कर जा छिपा । नाज़ीदल को छोड़कर प्रायः और सभी दलों
लोगों के साथ इसी तरह की सख़्ती का व्यवहार किया ग
नतीजा यह हुआ कि एक ही वर्ष के अन्दर लगभग ६०,०
स्त्री-पुरुष देश छोड़कर भाग गये । इनमें यहूदी कम्यूनिस्ट
समाजवादी सब इसी प्रकार के लोग थे, जिनका हिटलर की
हुकूमत में जर्मनी में रहना भारी हो गया था । अनेक देशों ने
अभागे लोगों की सहायता के लिए संस्थाएँ क़ायम कीं
"सहायता-फ़ंड" खोले । राष्ट्रसंघ की असेम्बली में भी इन लोगों
सहायता का प्रश्न उठाया गया और एक हाई कमिश्नर की नि
इनकी सहायता पहुँचाने के लिए हुई ।

इस तरह यहूदियों और दूसरी विरोधी शक्तियों का
करके हिटलर ने जर्मनी में अपनी और अपने दल की शक्ति
मज़बूत बना लिया ।

पिछले महायुद्ध में १२,००० यहूदियों ने जर्मनी के लिए
त्याग किये थे । युद्ध में मरे हुए सैनिकों के स्मारकों से उनके
तक नाज़ी सरकार द्वारा मिटवा दिये गये ।

हिटलर

हिटलर

जो कुछ मैं कहता हूँ और करता हूँ वह सब इतिहास है।

—हर हिटलर

निरन्तर युद्ध के द्वारा ही मानवजाति ने यह उन्नति की है, निरन्तर शान्त रहने से उसका नाश हो जायगा।

—हर हिटलर

महात्मा गांधी और हर हिटलर दोनों के चरित्र पर साथ-साथ विचार कीजिए। दोनों दो भिन्न-भिन्न छोरों पर खड़े हैं। एक शांति का पुजारी है पर संसार की शान्ति को बार-बार भंग करना दूसरे का क़रीब-क़रीब पेशा बन गया है। एक ने अहिंसा का व्रत ले रक्खा है तो दूसरे का विश्वास है कि असहनशीलता मनुष्यता के विकास के लिए परम आवश्यक है, हिंसा राष्ट्र की उन्नति के लिए अनिवार्य है और दया मनुष्य की दुर्बलता का चिह्न है। एक अपने

शत्रु तक के खिलाफ़ हिंसात्मक शक्तियों का प्रयोग करना अ
धर्म के विरुद्ध समझता है परन्तु दूसरे को निरपराध नागरिकों
पर बम बरसाने की आज्ञा देने में लेशमात्र भी संकोच नहीं हो
उल्टे मानवसंहार जितना ही अधिक हो उतनी ही उसे प्रस
होती है। एक ने सत्य की रक्षा के लिए अपने जीवन को सम
कर दिया है तो दूसरे के कोष में 'सत्य' जैसे शब्द को कोई स्
नहीं मिला—अपनी बात बदलते हुए उसे ज़रा देर नहीं लगती
आज की प्रतिज्ञाओं को कल भंग कर देने में वह ज़रा भी आ
पीछा नहीं करता। एक जहाँ अपने देश की स्वतंत्रता का हामी है
के साथ-ही-साथ संसार के अन्य देशों को भी स्वतन्त्र दे
चाहता है उसके विरुद्ध दूसरे की इच्छा है कि समस्त यूरोप, और
सके तो सारे भूमंडल पर जर्मनी की विजयपताका फहराये। एक
'समः शत्रौ च मित्रे च' (मित्र और शत्रु में समदृष्टि) का आ
होते हुए जीवमात्र से अपनी एकता कर देने का पक्षपाती है,
दूसरा मानवसमाज के अन्दर भी बराबरी की नीति को गन्दी
अप्राकृतिक बतलाता है। ईश्वर के विषय में एक का कहना है
"मैं बिना हवा और बिना पानी जी सकता हूँ परन्तु उसके
नहीं। आप मेरी आँखें निकाल लें मैं मरूँगा नहीं। आप
नाक काट लें, मैं मरूँगा नहीं। परन्तु ईश्वर में मेरे विश्वास
उड़ा दें तो मैं मर जाऊँगा।" इसके विपरीत दूसरे का कहना है
"ईश्वर है ही नहीं—मेरे लिए जर्मनी ही ईश्वर है।" एक
अपने विरोधी तक को प्रेम करने की और उसके हमें मारने प

उसके लिए प्रार्थना करने की शिक्षा देता है लेकिन दूसरे को अपने निकटतम मित्रों की हत्या करने में भी कुछ हिचक नहीं होती।

जर्मन दार्शनिक का हिंसा-प्रेम

मनुष्य शिकारी जानवर है, वीर, चालाक और निर्दय है। आदर्श कायरता के चिह्न हैं। प्रगतिमान् जीवों का शिकारी पशु ही सबसे ऊँचा स्वरूप है। सहानुभूति, राज़ीनामा और शांति ये दन्तहीन भावनाएँ हैं और घृणा ही 'शिकारी पशुओं की सबसे सच्ची जातीय भावना है।

—ऑस्वाल्ड स्पेंगलर

एक भारतवर्ष के स्वाधीन होने पर भी अंग्रेज़ जाति को यहाँ बराबरी की हैसियत में रखने का पक्षपाती है पर दूसरे ने अपने ही देश के निवासी यहूदियों पर नृशंस अत्याचार करके उन्हें विदेशों में शरण लेने को मजबूर कर दिया है।

डिक्टेटर का जीवन

ठिंगने क़द का, नाक के नथुनों से ज़रा-ज़रा बाहर निकली हुई चार्ली चेपलिन की सी मूँछोंवाला तथा दिन-रात यूरोपियन युद्ध में विजय के सुख-स्वप्न देखनेवाला—यही वह व्यक्ति हिटलर है जो इधर कई वर्षों से संसार की—विशेषकर यूरोप की—अशान्ति का

कारण बना हुआ है। सिर से लेकर पाँव तक उसके शरी
और कोई चिह्न ऐसा नहीं मिलता जिससे उसकी विशेषता
परिचय मिलता हो। उसकी नाक की बनावट में कुछ उद्दण्डता
नज़र आती है। संसार में अपने को सर्वश्रेष्ठ समझने के रोग
वह सदैव रोगी रहा है। अहंमन्यता और आत्मविश्वास के
उसमें कूट-कूटकर भरे हैं। उसकी पोशाक साधारण होती है।
अकसर ख़ाकी कमीज़वाली साधारण यूनिफ़ार्म पहनता है।
बरसाती कोट प्रायः हर समय उसके साथ रहता है।

हिटलर न कभी सिगरेट पीता है और न शराब। सिगरे
वह अपने सामने किसी और को भी न पीने देगा। वह शाका
है और मांस कभी नहीं खाता। हाँ, अंडे कभी-कभी ज़रू
लेता है। इस बात से यह न समझना चाहिए कि वह खाने-पी
मामले में एकदम बिल्कुल ही उदासीन है। अपना खाना
के लिए उसने एक बहुत ही अनुभवी और विशेषज्ञ रसोइ
रख छोड़ा है। वह काफ़ी कभी-कभी पीता है। चाकलेट चूस
लिए वह सप्ताह में एक-दो बार अपने निवासस्थान से 'कैसर
होटल जाया करता है।

कुछ लोगों का कहना है कि वह पहले शराब बहुत पीता
एक बार जब वह नशे में चूर होकर बिल्कुल बेहोश था तो
ऐसे गुण्डों के हाथ पड़ गया जो उसे ले जाकर उसकी हत्या
को तैयार थे। उसी समय एक अनजान व्यक्ति उसकी सहा
को आ पहुँचा और उसने हिटलर को उन लोगों के पंजे से

लिया। इसी भय के कारण उसने शराब पीना बिल्कुल छोड़ रक्खा है। जब से वह जर्मनी का डिक्टेटर बना है तब से उसकी अत्याचारपूर्ण नीति के कारण उसके अनेक लोग जानी दुश्मन हो गये हैं जो हर समय उसकी जान लेने की फ़िक्र में रहते हैं। अतएव अपनी रक्षा के लिए उसे हर समय चौकन्ना रहना पड़ता है। तब क्या आश्चर्य है कि बाबर बादशाह की तरह उसने भी शराब को तिलांजलि दे दी!

आत्मरक्षा के लिए उसे सदैव वैसे भी सतर्क रहना पड़ता है। उसे अपने शत्रुओं से हमेशा मौत का खटका लगा रहता है। बर्लिन में वह जिस मकान में रहता है, उसमें अपने छिपने के लिए वैज्ञानिक रीति से एक ऐसा कमरा बनवा रक्खा है जिस पर बम के गोलों का कुछ भी असर नहीं हो सकता। वह कभी रेलगाड़ी से यात्रा नहीं करता। जहाँ कहीं जाना होता है, या तो हवाई-जहाज़ में उड़कर जाता है या फिर अपनी मोटर में। एक बार वह रेल से हैमबर्ग से हैनोवर जा रहा था। रास्ते में कुछ क्रान्तिकारियों के षड्यन्त्र से दुर्घटना हो गई, जिसमें २० आदमियों की मृत्यु हो गई। हिटलर उस समय भी बाल-बाल बचा। तभी से उसने रेलगाड़ी से सफ़र करना छोड़ दिया है। जिस मोटर में वह चलता है वह दोनों तरफ़ से पत्थरनुमा शीशों से ढकी रहती है, जिन पर गोलियों की बौछारों का भी असर नहीं हो सकता।

जर्मनी के अन्दर किसी को भी यह पता नहीं लग सकता कि हिटलर कब, किस समय और कहाँ जा रहा है। रेल से तो वह

आता-जाता है ही नहीं। अपने आने-जाने की सूचना भी
दो-एक निकटतम व्यक्तियों को छोड़कर और किसी को नहीं दे
इस सम्बन्ध में समाचारपत्रों में भी कुछ नहीं छप सकता।

अपनी-सी ही शकल-सूरत के एक दूसरे आदमी को
अपना 'डबिल' नियुक्त कर रक्खा है। जब कभी हिटलर को
ऐसे स्थान पर जाना होता है जहाँ उसकी जान का खतरा हो
वहाँ वह स्वयं न जाकर अपने इसी 'डबिल'—प्रतिनिधि—को
देता है। इस ढोंगी हिटलर और असली हिटलर की शिनाख्त क
बड़ा मुश्किल है। इस नक़ली हिटलर को जर्मन सरकार के ख
से जितनी ऊँची तनख्वाह मिलती है उतनी और किसी सर
अफ़सर को नहीं।

एक बार हिटलर दो भिन्न-भिन्न स्थानों पर एक ही स
उपस्थित पाया गया। म्यूनिक नगर से लेकर साल्सबर्ग तक एक
मोटर की सड़क निकाली जा रही थी। इस सड़क का राजनै
महत्त्व होने से वहाँ हिटलर का मौजूद होना ज़रूरी था। उसी
म्यूनिक में जर्मन कलाभवन का उद्घाटन-उत्सव भी था। हि
को वहाँ भी जाना था। जहाँ सड़क निकाली जा रही थी
हिटलर की मौजूदगी खतरे से ख़ाली न थी। इसलिए वहाँ
उसने अपनी 'नक़ल' को भेज दिया और खुद कलाभवन के अ
में जाकर भाषण देने लगा। भोली-भाली जनता इस रहस्य
क्या जाने ? दो स्थानों पर अपने नेता की उपस्थिति देखकर लो
को विश्वास हो गया कि हिटलर अवतार है।

हिटलर को ऊँची शिक्षा नहीं मिली। सांस्कृतिक दृष्टि से भी बिना असाधारण उदारता दिखाये हम उसे सुसंस्कृत (Cultured) पुरुषों की श्रेणी में रखने को तैयार नहीं हैं। यद्यपि अपने जीवन में शुरू-शुरू में उसने चित्रकारी का पेशा किया है पर उसमें कलाकार की प्रतिभा का नाम भी नहीं है। वियना के चित्रकारी के विद्यालय में जाकर जब उसने अपने चित्र दिखलाये थे तो वहाँ के शिक्षक ने उन्हें 'चित्रकला' की जगह 'वास्तुविद्या' की वस्तु कहकर अस्वीकृत कर दिया था।

हिटलर को पढ़ने का शौक़ नहीं है। पुस्तकों की ओर उसकी रुचि नहीं है। यद्यपि उसके निजी पुस्तकालय में ६००० के क़रीब पुस्तकें हैं पर इनमें से वह किसी को छूता तक नहीं है। विद्वानों से वह घृणा करता है। मुसोलिनी इस दिशा में उससे बिल्कुल ही भिन्न है। पढ़ने की ओर उसकी रुचि है और वह अध्ययन से नित्य अपने ज्ञान की वृद्धि भी करता रहता है। जो कुछ वह करता है अपने राजनैतिक ज्ञान के आधार पर ही करता है। हिटलर के साथ यह बात नहीं। अपने कार्यों के लिए उसे बहुत कुछ अपने सलाहकारों के मशविरे पर ही निर्भर रहना पड़ता है। हिटलर ने जीवन भर 'वर्साई की संधि' पर आक्रमण किया है पर यह बात सन्देहयुक्त है कि उसने वर्साई की संधि को कभी पूरा पढ़ा भी है या नहीं।

हिटलर के अध्ययनशील न होनें का एक और भी कारण है। उसे जर्मन-जाति का नेता बनने में जो सफलता मिलती है

उसका एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण आधार है, उसका अपने दृढ़ आत्मविश्वास। सम्भव है पुस्तकें पढ़ने से—वाक़ात असलियत के मालूम होने से—उसके इस आत्मविश्वास में आ जाय।

संगीत से उसे अलबत्ता प्रेम है। वह संगीतालय अकसर रहता है। उसका गानविद्या का प्रेम इसी से साफ़ ज़ाहिर २५ जुलाई सन् ३४ के दिन जिस समय नाज़ीदल के लोग में डाक्टर डालफ़स की हत्या कर रहे थे, उस वक्त हिटलर विद्या के उत्सव में बैठा-बैठा आनंद ले रहा था। रात कभी वह बहुत थक जाता है तो उसकी नींद को बुलाने जर्मन गायक बुलाये जाते हैं। जब हम हिटलर के संगीत देखते हैं तो हमें सहसा सम्राट नीरो की याद आ जाती है भी हिटलर की तरह ही हत्याकाण्ड और रक्तपात का प्रेमी हुए भी गानविद्या से विशेष प्रेम रखता था। अपनी अग्नि की लपटों में भस्म होते हुए रोम नगर के छटपटाते नारियों को देखता हुआ नीरो भी वीणा-गान में मग्न था।

'उघरे अंत न होय निबाहू'

हिटलर की झूठी प्रतिज्ञाएँ इतिहास की स्थायी सम्पत्ति हैं। सत्य-असत्य में वह कोई अंतर नहीं समझता। जो उसने आज की है उसे वह कल को ही रद कर सकता है जो वह कहता है कल उसके बिल्कुल खिलाफ़ करने में न हिचकेगा। उसकी नीति स्थायी नहीं रहती।

बवेरिया के अधिकारियों को उसने वचन दिया था कि वह उन पर आक्रमण नहीं करेगा, पर कुछ ही समय बाद उसने अपने इस वचन को भंग कर दिया।

उसने वादा किया था कि वह पेपन गवर्नमेंट के ख़िलाफ़ सिर न उठायेगा किन्तु अपना पक्ष प्रबल होते ही वह उससे लड़ पड़ा। उसने घोषणा की कि वह पहले मंत्रिमंडल को न बदलेगा, पर मौक़ा पाते ही उसे भी बदल दिया। उसने कहा था कि यदि म्यूनिक चक्र असफल रहा तो मैं आत्महत्या कर लूँगा, यह विद्रोह असफल रहा, पर वह आज तक जीवित है।

यहाँ हम हिटलर की प्रतिज्ञाओं का और कैसे-कैसे उसने उन्हें तोड़ा, इसका ब्योरेवार खाता देते हैं—

प्रतिज्ञा की	प्रतिज्ञा तोड़ी
"जर्मन-जाति का किसी देश पर आक्रमण करने का इरादा नहीं है" (नये चांसलर की हैसियत से जर्मन-पार्लियामेंट में दिया हुआ भाषण)	पोलैण्ड पर उसी के आक्रमण करने के कारण यूरोप में आज युद्ध जारी है।
"जर्मनी, फ्रांस और पोलैण्ड सभी को रहना है। ....हम सब रामजात को दूसरे देश की सर-	विगत ३ सितम्बर (१९३८) को उसने अपने जहाज़ों को पोलैण्ड की राजधानी वारसा पर

प्रतिज्ञा की

कारों से शान्तिपूर्ण उपायों से निबटारा कर लेंगे।"

—हिटलर का रेडियो भाषण
२७ मई, १९३३

"प्रत्येक राष्ट्र को चाहिए कि वह दूसरे राष्ट्रों को भी उसी तरह रहने दे जिस तरह कि उस राष्ट्र के निवासी पसंद करें।"

—हिटलर, २८ मार्च, १९३६

"जर्मनी की यह हर्गिज़ इच्छा नहीं है और न वह यह चाहता ही है कि आस्ट्रिया के अन्दरूनी मामलों में दख़ल दे। आस्ट्रिया को जर्मन-राष्ट्र में मिलाने का हम ख़याल भी नहीं करते।"

—हिटलर, २१ मई, १९३५

"अब हमारे सामने एक आख़िरी मसला पेश है जो हल हो जाना चाहिए। यूरोप में मेरी

प्रतिज्ञा तोड़ी

बम बरसाने की ग़रज़ से दिया।

आस्ट्रिया तथा चेकोस्लोवाकिया के निवासी कब अपनी स्वाधीनता की बलि देने को तैयार थे ?

जर्मनी ने आस्ट्रिया को अधिकार में कर लिया।

मार्च ११, १९

म्यूनिक में चेकोस्लोवाकिया मिल जाने पर भी उसने डान्ज़िग की माँग पेश की

प्रतिज्ञा की	प्रतिज्ञा तोड़ी
यह आख़िरी माँग है । मैं इसे छोड़ नहीं सकता ।" —हिटलर, २६ सितम्बर, १९३८	पोलैण्ड में लड़ाई छेड़ दी ।
"बोल्शेविज़्म एक पागलपन है । रूस से मेरा समझौता कभी हो ही नहीं सकता ।" —हिटलर, १३ सितम्बर, १९३६	पोलैण्ड पर चढ़ाई करने के दो-चार दिन पहले ही जर्मनी और रूस में समझौता हो गया ।
"मैं युद्ध में बच्चों और स्त्रियों के विरुद्ध अपने शस्त्रों का प्रयोग न करूँगा ।" —हिटलर, १ सितम्बर, १९३९	फिर भी हज़ारों बच्चे और स्त्रियाँ पोलैण्ड, नार्वे, बेल्जियम, डेन्मार्क, फ्रांस आदि देशों में जर्मनी के हवाई आक्रमणों के शिकार हुए हैं ।

प्रारंभिक जीवन

जर्मनी और आस्ट्रिया की सीमा पर स्थित ब्रोनाओ-नामक एक छोटे से गाँव में २० अप्रैल, १८८९ को हिटलर ने जन्म लिया । उसका पिता पहले एक मोची था पर बाद में उसने चौकीदारी की नौकरी कर ली थी । उसकी माता एक ग़रीब किसान की लड़की थी । वह चित्रकारी का काम जानती थी । उसने यह काम हिटलर को भी, जब वह छोटा ही था, सिखा दिया था ।

हिटलर के पिता का नाम था—एलोइस हिटलर । उसने तीन शादियाँ की थीं । हिटलर की माँ—क्लारा पोइलज़ल—से की जाने-

वाली शादी तीसरी थी। दोनों का विवाह ७ जनवरी, १८८५ ई०
हुआ था। चार वर्ष बाद क्लारा के गर्भ से एडोल्फ़ हिटलर—तीसरे
जर्मन-साम्राज्य का निर्माता—पैदा हुआ।

क्लारा बचपन में एलोइस हिटलर की पहली पत्नी की नौकरानी
रह चुकी थी। एलोइस की नज़रों में वह तभी जगह पा चुकी थी।
कुछ दिन बाद क्लारा भागकर वियना चली गई। उसके इस प्रकार भाग
जाने का क्या कारण था, इसका पता नहीं चलता। दस वर्ष तक
क्लारा वियना में रही। कैसे? कहाँ? यह कुछ मालूम नहीं।
१८८५ में वह अपनी जन्मभूमि को लौट आई और उसी
एलोइस से, जो अपनी दो पत्नियों के वियोग का शोक मना रहा
था, उसने शादी कर ली।

बालक एडोल्फ़ अपनी माँ को तो प्यार करता था किन्तु अपने
पिता के लिए उसके हृदय में प्रेम न था। यह बात हिटलर के
चरित्र-निर्माण में विशेष रूप से सहायक हुई। उसका चरित्र पिता
के में नहीं—माता के चरित्र के ढाँचे में ढला। अपने पिता से
वह बिल्कुल ही भिन्न निकला। उसका पिता शराबी था, पुत्र शराब
छूता तक नहीं। पिता ने एक पत्नी के मर जाने के बाद फ़ौरन ही
दूसरी शादी कर ली, पुत्र आजीवन ब्रह्मचारी रहा है। पिता वासनाओं
में लिप्त रहता था, पुत्र इन बातों से कोसों दूर है।

विद्यार्थी होने की अवस्था में हिटलर की भूगोल और संसार
का इतिहास, इन दो विषयों में बड़ी दिलचस्पी थी। थोड़ी अवस्था
में ही उसके ऊपर उसके इतिहास के प्रोफ़ेसर का काफ़ी प्रभाव

पड़ चुका था। उन्होंने ही उसे जर्मनी का कट्टर भक्त बना दिया। हिटलर चित्रकारी का अभ्यास भी किया करता था। उसके बचपन के चित्र वियना के कला-भवन में अब तक मौजूद हैं। उनमें न कलाकार की भावना है, न कल्पना। उसे विद्यालय में स्थान भी न मिल सका था। हारकर आगे चलकर उसने कलाकार बनकर जीवन बिताने का विचार छोड़ दिया।

बचपन में ही हिटलर के माँ-बाप दोनों का देहान्त हो गया था। उसे अपनी रोज़ी कमाने की चिन्ता हुई। उसने अपने कुछ चित्र बग़ल में दबाये और रोज़गार की तलाश में वियना नगर की ओर चल दिया। तब उसकी आयु १७ वर्ष की थी और उसकी जेब में ५० क्राउन थे। वह चित्रकार बनकर अपना पेट भरना चाहता था।

वियना के चित्रकारी के विद्यालय में जाकर उसने अपने चित्र दिखलाये। वे अस्वीकृत रहे।

हारकर उसने बनती हुई इमारतों में काम करनेवाले मज़दूरों के साथ मज़दूरी शुरू कर दी। वे दिन उसके लिए बड़ी मेहनत और ग़रीबी के दिन थे। पीछे से इन मज़दूरों के दल से उसकी अनबन हो गई। सबने मिलकर उसका बहिष्कार कर दिया। उसे मज़दूरी भी अब कम मिलने लगी। काम चलाना कठिन हो गया। उसने फिर अपने चित्रकारी के काम को उठा लेना चाहा।

सन् १९१२ की बसन्त ऋतु में हिटलर म्यूनिक में आ गया। यह जर्मन नगर था। यहाँ आकर उसका चित्त प्रसन्न

हुआ। वहाँ दो वर्ष तक वह चित्रकारी के पेशे से अपना का[म]
चलाता रहा।

सेना में

सन् १४ में लड़ाई छिड़ गई। ऐसे अवसर की तो वह प्रतीक्षा [कर]
कर रहा था। तुरन्त अपना नाम लिखाकर वह जर्मन-सेना में भ[र्ती]
हो गया। युद्धक्षेत्र में लड़ते-लड़ते वह दो बार घायल भी हु[आ]
और उसे 'कारपोरल' (Corporal) का पद दिया गया। युद्ध [के]
अन्तिम दिनों में जब जर्मन-शक्ति का अन्त हो रहा था तब ब[र्लिन]
के निकट किसी अस्पताल में वह अपना इलाज करा रहा था।
विषैली गैस लग जाने से वह लगभग अंधा हो चुका था। यु[द्ध]
समाप्त होने पर जब उसने सुना कि जर्मनी में प्रजातंत्र की स्थाप[ना]
हो चुकी तो वह रो पड़ा। उसने लिखा है कि अपनी माँ की [मृत्यु]
पर आँसू बहाने के बाद जीवन में रोने का उसके लिए यह दू[सरा]
अवसर था।

महायुद्ध के दिनों में उसे 'आयरन क्रास' मिला था। उसे [जिस]
कार्य के लिए यह पदक मिला था उससे उसकी वीरता और साह[स]
का उतना परिचय नहीं मिलता जितना कि उसकी सहज बुद्धि [और]
चातुरी का।

तब वह चपरासी का काम करता था। एक बार वह कुछ ज़[रूरी]
काग़ज़ों को लेकर एक स्थान से दूसरे स्थान को जा रहा था। [उस]
समय उसके पास केवल एक रिवाल्वर ही थी और कोई हथि[यार]

न था । अकस्मात् उसने कुछ फ्रांसीसी सिपाहियों के आने की आहट सुनी । वह बड़ा घबड़ाया पर उसने सहज-बुद्धि से काम लिया । उसने ऊँचे स्वर से फ़ौजी आज्ञाएँ देनी शुरू कर दीं । वहाँ कोई जर्मन सैनिक असल में नहीं था । यों ही फ़र्ज़ी सैनिक मानकर उसने आज्ञा देना शुरू कर दिया था । फ्रांसीसी सैनिकों ने समझा कि पास ही में जर्मन-सैनिकों की कोई टुकड़ी है जो उन पर हमला करने को इधर बढ़ी आ रही है । वे घबड़ा गये और तत्काल खाइयों से निकलकर बाहर आ खड़े हुए । हथियार डाल दिये और ऊँचे हाथ उठाकर हिटलर के हाथों आत्मसमर्पण कर दिया । हिटलर अकेला उन्हें अपने साथ ले गया और क़ैदियों के साथ बन्द करवा दिया ।

उसकी सफलता के स्रोत

हिटलर किन बातों के बल से जर्मन-जाति पर अपना ऐसा अमित प्रभाव जमाने में सफल हुआ ? उसके पास ऐसा कौन-सा मायामंत्र है ? उसकी शक्ति के कारण क्या हैं ? शारीरिक बल ? नहीं । साहस ? नहीं । फिर ?

निस्सन्देह वह जर्मनी का बड़ा सच्चा भक्त है । उसकी देशभक्ति सनक के क़रीब ही पहुँच गई है । जर्मनी पर उसे अभिमान है । यह उसकी नस-नस में कूट-कूट कर भरा है । इस 'अभिमान' को हम 'ख़तरनाक अभिमान' कह सकते हैं । स्वदेशाभिमान की यह बूटी उसने अपने देशवासियों को इन शब्दों में पिला रक्खी है—

"जर्मनी का भंगी बनकर रहना ग़ैर मुल्क का राजा बनकर रहने से ज़्यादा प्रतिष्ठा की बात है।"

इसे पीकर जर्मन-जाति अपने को सबसे श्रेष्ठ समझती है। हिटलर जर्मनी के सरकारी ख़ज़ाने से वेतन नहीं लेता। उसे इसकी ज़रूरत भी क्या है? उसे धन का लोभ नहीं। जर्मन-जाति को सार्वभौमिक शक्ति बनाने के लोभ ने उसके हृदय में और किसी प्रकार के लोभ अथवा लालच के लिए जगह नहीं छोड़ी। जर्मनी, बृहद् जर्मनी, उन्नत जर्मनी जिसकी चोटी पर वह स्वयं बैठा हो—यह है उसके जीवन का स्वप्न, मिशन और उद्देश। इस उद्देश की पूर्ति के लिए उसे चाहे कुछ भी करना पड़े, उसके विचार में सब उचित है। उपाय बदल सकते हैं पर उसका उद्देश कभी नहीं। जर्मनी को अपने झंडे के नीचे एकत्रित करने में उसे जो सफलता मिली है इसमें उसके इस लक्ष्य की एकता का भी बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है।

इसके अतिरिक्त हिटलर में कार्य करने की क्षमता भी है और शारीरिक सामर्थ्य भी। उसमें शारीरिक श्रम को सहन करने की शक्ति की भी कमी नहीं है। अनेक सभाओं में भाषण कर चुकने के बाद भी यदि कोई उससे मिले तो वह तरो-ताज़ा दीख पड़ेगा। वह अपने नीचे काम करनेवालों की छाँट होशियारी के साथ करता है। वह उनसे काम भी कसकर लेता है। इन लोगों से हिटलर हर विषय की जानकारी प्राप्त करता रहता है। वह इनका विश्वास करता है। यदि कभी उसे उनकी ओर से संदेह होने लगता है तो उन्हें मरवा देता है।

हिटलर के अन्दर असाधारण भावुकता है। यह उसकी सफलता का सबसे बड़ा कारण है। उसके पास दिमाग़ी शक्ति इतनी ज़बर-दस्त नहीं है जितनी कि आवेशपूर्ण भावुकता। वह न दलीलों का प्रेमी है और न बहुत विवेकशील। ग़ैर मुल्कों की राजनैतिक परिस्थितियों का उसका ज्ञान भी थोड़ा है पर उनके सम्बन्ध में उसकी अपनी धारणाएँ प्रबल होती हैं।

डिमास्थनीज़ का अवतार

संसार के जीवित प्रभावशाली वक्ताओं में हिटलर का मुख्य—सबसे श्रेष्ठ—स्थान है। इस कला में वह पारंगत है। अपनी इसी अद्वितीय भाषण-कला के बल से वह जर्मनी का नेता बना हुआ है। जब वह भाषण देने को खड़ा होता है तो सबसे पहले अपने श्रोताओं से चिल्लाकर कहता है—"जर्मनी"। क्षण भर को वह चुप हो जाता है और फिर पहिले से भी अधिक ज़ोर से चिल्लाकर बोलता है—"जर्मनी"। कुछ क्षण के लिए वह फिर मौन हो जाता है और तीसरी बार फिर अपना सारा ज़ोर लगाकर गरजता है—"जर्मनी"।

जनता में उसके जोश का नशा-सा छा जाता है! सब पर मानों छूमंतर की लकड़ी फिरा दी जाती है। श्रोता हर्षित होकर नारे लगाते हैं, चीखते हैं और रोते भी हैं। राजनैतिक सभा भक्तों की मंडली के रूप में बदल जाती है। आजकल उसकी पार्टी के जो प्रमुख लोग—गोरिंग, गोएबुल, ब्रूकनर तथा हैस आदि—हैं, ये लोग

ऐसे ही हैं जिन्होंने हिटलर के भाषणों को सुना, प्रभावित हुए औ
फिर तभी से आज तक उसके साथ हैं ।

एक दूसरा लेखक हिटलर के भाषण का आँखों देखा वर्णन कर
हुआ कहता है—

"सभा ८½ बजे शुरू होनी थी । जिस हाल में सभा
आयोजन किया गया था उसके दरवाज़े ७ ही बजे से खोल दिये ग
थे । मैं ७ बजकर १० मिनट पर वहाँ पहुँच गया । मेरे आने
पहले ही पाँच-छः हज़ार लोगों की भीड़ वहाँ जमा हो गई थी
रोशनी का प्रबन्ध बहुत काफ़ी था । नाज़ीदल के झंडे लगे हुए
और दीवारों पर बड़े-बड़े नारे लिखे हुए टँग रहे थे—

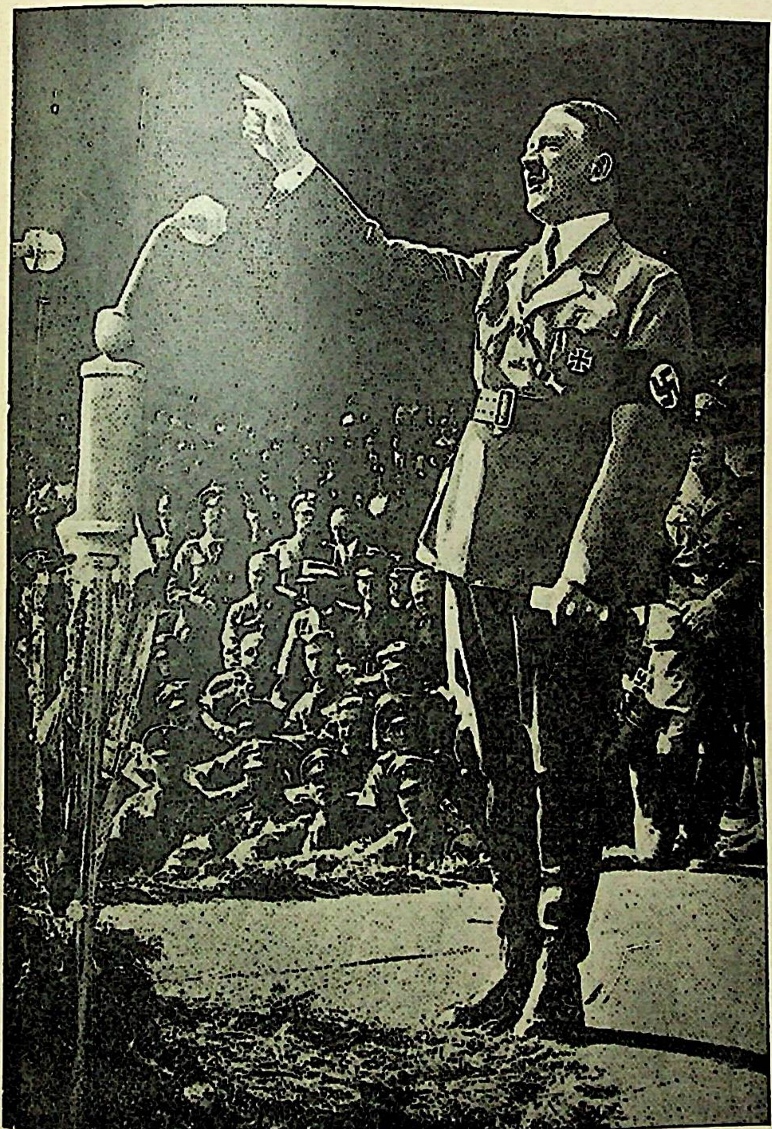
"जर्मन लोगो, हिटलर में मिलकर एक हो जाओ !"

"मार्क्सवाद का मरण हो ताकि जर्मनी जीवित रहे ।"

"हिटलर—आज़ादी, काम और भोजन के वास्ते !"

"ढाई घंटे की प्रतीक्षा के बाद बैन्ड बजा । हिटलर दाखिल हो
है । आगे-आगे झंडे आते हैं । सारा जनसमूह खड़ा हो जाता है
१,२५,००० कण्ठों से बार-बार ध्वनि निकलती है—'हाइल हिटल
'हाइल हिटलर' । प्लेटफ़ार्म से हिटलर ने अपना हाथ उठाया । सब शा
हो गये । अपने-अपने स्थानों पर पुनः बैठ गये । एक व्यक्ति प
खड़े होकर 'नेता' का स्वागत करता है । नेता ने हाथ उठा
भाषण शुरू किया । तीन घंटे तक चूँ भी न हुई—कोई खाँसा
नहीं । ऐसा उसका जादू था ।"

"जिस अंश ने श्रोताओं को बहुत प्रभावित किया वह यह थ



हिटलर भाषण दे रहा है

'मैं पेपन* गवर्नमेंट' में शामिल क्यों नहीं हुआ, इस बात को लेकर लोग मुझपर फब्तियाँ कसते हैं। मैं क्यों शामिल नहीं हुआ ? मैं पेपन का पिछलग्गू बनना नहीं चाहता। लोग दलील देते हैं—रेल पर सवार हो जाना चाहिए और यदि वह पसन्द न आए तो पहले ही स्टेशन पर उतर जाना चाहिए। हाँ, ऐसा हो सकता है। पर ग़लत दिशा में जानेवाली गाड़ी पर सवार ही क्यों हुआ जाय—विशेषकर तब जब कि यह निश्चित नहीं है कि वह वहाँ भी पहुँच सकेगी या नहीं। मुझमें उतनी फुर्ती है नहीं कि चलती गाड़ी में से फुदककर बाहर निकल जाऊँ। इसके अलावा मेरे साथ भारी बोझ का सामान भी है। १४०,००,००० व्यक्तियों को साथ में लेकर भीतर-बाहर उछल-कूदकर नहीं जाया जा सकता।

'मैं ठीक दिशा में जानेवाली गाड़ी पर सवार होने के लिए तैयार हूँ बशर्ते कि उसके एंजिन का ड्राइवर मैं ही हूँ। माल के डिब्बे में बैठकर ऐसी गाड़ी में भी नहीं जा सकता। मैं वाइस-चांसलर के पद पर काम कर सकता था और लोगों का कहना है कि चांसलर की अनुपस्थिति या बीमारी की हालत में वाइस-चांसलर को कार्य करने की स्वतंत्रता होती है। मैं पूछता हूँ कि जब मैं वाइस-चांसलर होता तो क्या आप समझते हैं चांसलर कभी ग़ैरहाज़िर या बीमार रह सकता था ? (नहीं, नहीं)'

'उन लोगों का यह भी कहना है कि पेपन हुकूमत का पुर्जा बन-

---

* हिटलर के शक्ति पाने से पूर्व जर्मनी का चांसलर।

कर और कुछ नहीं तो मैं अपना प्रभाव ही काम में ला स था। इसके उत्तर में मेरा कहना है कि मैं ऐसे कोरे प्रभाव में वि नहीं रखता जो अमल में न बदला जा सके। मुझसे यह भी जाता है कि इस पद का कुछ सजावटी मूल्य भी है। ईश्वर ने सजावट की वस्तु बनाया ही नहीं। कुछ लोगों का विचार है कि पद पर काम करने से मुझे वेतन भी मिलता और मेरा रुतबा बढ़ता। मुझे वेतन की ज़रूरत नहीं और जहाँ तक रुतबे का स है, मेरी नज़र में मेरे नाम 'हिटलर' से बड़ा और कोई रु नहीं है'।"

घोषणापत्रों में हिटलर प्रत्येक जर्मन पुरुष तथा स्त्री को कहकर सम्बोधित करता है—"जर्मन पुरुष, क्या तूने कभी बात पर ध्यान दिया है, जर्मन स्त्री, क्या तू कभी यह सोच कि...." आदि आदि। वैयक्तिक रूप से वह किसी जर्मन घनिष्ठता नहीं रखता, पर सामूहिक रूप से वह अपने आप जर्मन-जाति के साथ एक रूप में मिला हुआ दिखलाता है। अपने भाषणों तथा घोषणाओं में सदा 'मेरी जर्मन-जाति' अ 'हम जर्मन लोग' कहता है।

हिटलर के मित्र

हिटलर का कोई भी व्यक्ति मित्र नहीं कहा जा सकता। वह शक्की स्वभाव का है। उसे किसी का विश्वास नहीं है। सं भर में यदि वह किसी का थोड़ा-बहुत विश्वास करता है तो

अपने प्रधान अंगरक्षक लेफ्टिनेन्ट ब्रूकनर का ही। शुरू में अर्नस्ट रोह्म भी उसके निकटतम व्यक्तियों में से था। एक-दो व्यक्तियों को छोड़कर और कोई व्यक्ति विना सूचना दिये उसके पास नहीं आ सकता। इन दो व्यक्तियों में से एक तो उसका परराष्ट्र मंत्री रिबनट्राप है। दूसरा था जर्मनी का आर्थिक डिक्टेटर डाक्टर शाख्ट परन्तु अब डाक्टर शाख्ट को उसने अर्थमंत्री के पद से हटा दिया है। नहीं कहा जा सकता कि अब कोई दूसरा व्यक्ति भी ऐसा है जो बिना किसी प्रकार की सूचना दिये हिटलर के पास चला जाय। गोएबुल अथवा गोरिंग को भी उससे मिलने की पहले इजाज़त लेनी पड़ती है।

हिटलर के प्रधान अंगरक्षक के नीचे दो और सहायक होते हैं। ये तीनों इस बात के लिए सरकारी तौर से बाध्य हैं कि यदि उनकी रक्षा और निगरानी में हिटलर को कोई शारीरिक हानि पहुँचेगी तो उन्हें भी आत्म-हत्या करनी पड़ेगी। जब कभी बर्लिन में हिटलर की सवारी निकलती है तो ब्रूकनर सदैव उसके बराबर बैठता है। उसके दोनों ओर राइफ़ल लिए हुए सैनिक चलते हैं। जब कभी उसकी सवारी बहुत बड़ी भीड़ में होकर गुज़रती है तो सेना के पहरेदारों की पंक्तियाँ अन्दर और बाहर दोनों ओर को मुँह किये हुए खड़ी रहती हैं।

अपने वस्त्रों के नीचे हिटलर सदैव एक सुदृढ़ कवच पहनकर बाहर निकलता है। उसके बर्लिन के निवास-स्थान में १५० हथियारबन्द पहरेदार उसके साथ रहते हैं। बर्लिन में रहना उसे अधिक

पसंद नहीं है। वह ज़्यादातर या तो म्यूनिक में रहता है या जर्मनी तथा आस्ट्रिया की सीमा पर बसे हुए एक पहाड़ी स्थान बर्कटेस-गाडन में।

नारीजाति और हिटलर

हिटलर ने अपना विवाह नहीं किया। उसे नारीजाति में भी दिलचस्पी नहीं है। वह उन्हें न तो उच्च शिक्षा दिलाने का पक्षपाती है और न यही उचित समझता है कि स्त्रियाँ उन क्षेत्रों में काम करें जिनमें अब तक पुरुष करते आये हैं। उसका विचार है कि स्त्री का कार्यक्षेत्र घर ही है। शक्ति पाने के थोड़े ही दिनों बाद उसने उन स्त्रियों को, जो दफ़्तरों तथा स्कूलों आदि में काम करती थीं, निकाल बाहर किया। उसका आदेश है कि जर्मन-स्त्रियाँ घरों में रहें और युद्धक्षेत्र के लिए पुत्र पैदा करें।

हिटलर ने किसी स्त्री से प्रेम किया या नहीं, वह अब भी किसी स्त्री से प्रेम करके अपनी वासनाओं को तृप्त करता है या नहीं, यदि हिटलर किसी से प्रेम करता है तो वह प्रेमिका कौन है आदि, ये सारी बातें ऐसी हैं जिन पर निश्चित रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। भिन्न-भिन्न लोगों के भिन्न-भिन्न मत पाये जाते हैं। कई स्त्रियाँ उसकी ओर आसक्त भी हुई हैं पर निराश होकर उन्होंने उसका पीछा छोड़ दिया है। गोएबेल्स की पत्नी ने हिटलर के लिए अर्धांगिनी तलाश करने की ग़रज़ से अनेक जर्मन-सुंदरियों को अपनी पार्टियों में बुलाया भी पर वह असफल रही। हिटलर ने किसी की ओर अपनी रुचि प्रकट नहीं की।

कुछ लेखकों का विचार है कि हिटलर में कोई ऐसी शारीरिक त्रुटि है जिसके कारण वह स्त्रियों से किसी प्रकार का सम्बन्ध रखने के योग्य ही नहीं रह गया है। कुछ फ्रांसीसी पत्रों ने उसकी कुछ प्रेमिकाओं के चित्र भी निकाले थे। हाल ही में कुछ और भी अखबारों में ऐसी नारियों के चित्र प्रकाशित हुए हैं जिन्हें हिटलर की प्रेमिका बतलाया जाता है।

जर्मन-प्रचारमंत्री गोएबेल्स की लड़की अलबत्ता हिटलर के साथ प्रायः देखी जाती है। वह काफ़ी उम्र की भी है और किसी ग़ैर आदमी की मौजूदगी में भी उसकी गोदी में बैठने से नहीं हिचकती। सम्भव है यह प्रेम पिता-पुत्री का हो।

कुछ लोग हिटलर को अप्राकृतिक व्यभिचारी भी बताते हैं। सुप्रसिद्ध अन्तर्राष्ट्रीय पत्रकार जान गुन्थर का इस सम्बन्ध में कहना है कि "इस बात का कोई प्रमाण अब तक नहीं मिल सका है जिससे यह सिद्ध हो सकता हो कि हिटलर की किसी भी समय किसी से भी घनिष्ठता रही हो।" उनके विचार से यह भी संभव है कि "अपने जीवन में हिटलर का किसी भी स्त्री से कभी कोई सम्बन्ध ही न रहा हो।"

हिटलर का कुटुम्ब

हिटलर को अपने ज़ाती ख़र्च के लिए धन की कोई ज़रूरत नहीं है। जीवन की सब सुविधाएँ उसे राज्य की ओर से प्राप्त हैं। इसी लिए वह जर्मन-राष्ट्र के सरकारी ख़ज़ाने से कोई वेतन नहीं

लेता। जहाँ तक कुटुम्ब का सवाल है, उसके लिए कहा जा सकता है—

'जोरू न जाता; अल्ला मियाँ से नाता।'

उसके पिता की पहली पत्नी से दो बच्चे थे—एक लड़का और एक लड़की। इनमें से लड़का—हिटलर का भाई—तो एक होटल में नौकर हो गया था और आजकल अपना खुद का रेस्टोराँ चला रहा है। लड़की एंजीला वियना में रसोई बनाने का काम करती थी। कुछ दिन हुए हिटलर उसे अपने साथ ले आया था और अब वह उसी के भवन में 'हाउस कीपर' का कार्य करती है।

अपनी असली माता से भी हिटलर के अतिरिक्त उसके दो भाई-बहिन और थे। भाई बाल्यावस्था में ही मर गया था। बहन—पौला—अब भी वियना में अपना साधारण जीवन व्यतीत कर रही है। नाज़ियों ने उसे सार्वजनिक कार्यक्षेत्र में घसीटकर वीराङ्गना बनाना चाहा पर उसका स्वभाव इस प्रकार के कार्य के लिए बिल्कुल ही विपरीत था। उसने इस तरह का कार्य पसन्द न किया। ज़ाहिरा तौर से हिटलर उससे अब कोई सम्बन्ध नहीं रखता।

अपनी पुस्तक 'माइन काम्फ़' से उसे काफ़ी आय हुई है। इसके सिवा वह नाज़ीदल के प्रमुख पत्रों में हिस्सेदार भी है जिनसे काफ़ी बड़ी रक़म की आय उसे हो जाती है। यूरोप में प्रमुख नेताओं की निजी सम्पत्ति का पता लगाना बड़ा ही मुश्किल काम है।

उसे देवी-देवताओं की सम्पत्ति के समान पावन समझा जाता है। फिर हिटलर, मुसोलिनी अथवा स्टालिन कोई चीज़ दाम देकर भी खरीदते होंगे, इसमें संदेह है।



डिक्टेटर ऐसे शासन करता है

डिक्टेटर ऐसे शासन करता है

"हे प्रभु ! मुझे ऐसी शक्ति दे कि मैं कभी किसी अत्याचारी की शक्ति के आगे घुटने न टेकूँ।"

—रवीन्द्रनाथ ठाकुर

पिछले १६ दिसम्बर की बात है। बर्लिन की एक अदालत ने एक जर्मन को चार वर्ष के कारागार की सज़ा दी। अपराध? रेडियो पर उसने विदेशी प्रोग्राम सुना था। बेचारे को सारे नागरिक अधिकारों से भी वंचित कर दिया गया।

पोलैण्ड को जीत लेने के बाद वहाँ के निवासियों के लिए निम्नलिखित आज्ञाएँ निकाली गईं—

"मोटर का भोंपू बजते ही सबको सड़क छोड़कर हट जाना चाहिए। जब नाज़ीदल के लोग किसी तरफ़ से गुज़रें तो सबको

अपने टोप उतारकर उन्हें सलाम देनी चाहिए। दूकान पर पो
लोगों को तब तक खड़े-खड़े इन्तज़ार करना चाहिए जब तक
जर्मन लोग ख़रीदकर न निबट जायँ।

कोई यहूदी २००० ज़्लोटी (पोलैण्ड का सिक्का) से ज़्याद
की सम्पत्ति अपने पास नहीं रख सकता जिसमें से नक़द सि
१०० ही होने चाहिएँ। ५०० से ऊपर की रक़म का जो क़
किसी यहूदी का किसी पर चाहिए वह सब माफ़ किया जाता है
उन्हें 'रेडक्रास' संस्था की सहायता न मिले। वे लोग अपने घ
में रेडियो भी नहीं लगा सकते।"

आस्ट्रिया जब नाज़ियों के अधिकार में आ गया तो वहाँ
७००० निवासियों ने 'नाज़ी राज' में जीवित रहने से प्राण दे दे
अच्छा समझा। एक मकान के अन्दर, बच्चों को छोड़कर, जि
स्त्री-पुरुष रहते थे सबने आत्महत्या कर ली। दूसरे दिन ना
सरकार की ओर से उसके दरवाज़े पर लटकवाया गया—

Zur Nachahmung Empfohlen

औरों के लिए ऐसा करने की सिफ़ारिश की जाती है।

पं० जवाहरलाल के विचार

नाज़ीवाद और फ़ैसिज़्म दोनों क़रीब-क़रीब एक-सा ही अर्थ रखनेवा
शब्द हैं। अन्तर इतना ही है कि एक पर जर्मन मुहर है औ
दूसरे पर इटली की। दोनों ही कमज़ोर राष्ट्रों की स्वतंत्रता
कुचल डालने के पक्षपाती हैं, हिंसा के प्रेमी हैं और जाति-भाव

को बढ़ाकर संघर्ष बढ़ाने के हिमायती हैं। इन दोनों के मिल जाने के परिणाम को हम अपने ही सर्वप्रिय नेता—पं० जवाहरलाल नेहरू—के मुख से सुनें:—

"एक तरह का फ़ैसिस्ट अन्तर्राष्ट्रीय संगठन (फ़ैसिस्ट इंटर-नेशनल) बन गया है जो न सिर्फ़ खुली और बग़ैर ऐलान की हुई लड़ाइयाँ लड़ता है बल्कि मुख्तलिफ़ मुल्कों में सदा इस तरह की साज़िशें करता रहता और ऐसे फ़साद खड़े करता रहता है जिनसे इसे दस्तन्दाज़ी करने का मौक़ा हाथ आये। युद्ध और हिंसा की खुले तौर से प्रशंसा की जाती है और इतना व्यापक और झूठा प्रचार-कार्य किया जा रहा है जितना पहले कभी नहीं किया गया था।"

आगे—

"यह अन्तर्राष्ट्रीय फ़ैसिज़्म बड़े उग्र और कट्टर ढंग का साम्राज्य-वाद ही नहीं है, बल्कि मध्य युगों की तरह इसने धार्मिक और जातीय संघर्ष भी पैदा कर दिये हैं। जर्मनी में कैथलिक चर्च और प्रोटेस्टेण्ट दोनों तरह के ईसाई-संप्रदायों को दबाया जा रहा है। जर्मनी में, और बाद में इटली में, जाति (Race) की भावना पर अभिमान की वृत्ति पैदा की जा रही है एवं उसे यशस्वी रूप दिया जा रहा है। और यहूदियों तथा यहूदियों के वंशजों तक को जिस बेरहमी और वैज्ञानिक भयंकरता के साथ निकाला तथा नष्ट किया जा रहा है, उसकी इतिहास में कोई दूसरी मिसाल नहीं है। नवम्बर १९३८ के शुरू में एक जवान पोलिश यहूदी ने, अपनी जाति पर

होनेवाले निर्दय अत्याचारों से पागल होकर, एक जर्मन कूटनीतिज्ञ का पेरिस में खून कर दिया। यह एक व्यक्ति का काम था, पर इस वाक़ये के होते ही जर्मनी में सारे यहूदी बाशिन्दों के खिलाफ सरकारी तौर पर संगठित अत्याचार शुरू हो गये। देश के एक-एक यहूदी-मंदिर आग लगाकर भस्म कर दिये गये। यहूदी-दूकानों को बड़े पैमाने पर लूटा और नष्ट-भ्रष्ट किया गया। आम सड़कों पर और घरों के अन्दर मर्द-औरतों पर बेशुमार वहशियाना हमले और दुर्व्यवहार किये गये। इन सबको नाज़ी लीडरों ने मुनासिब क़रार दिया और इनके अलावा जर्मनी के यहूदियों पर आठ करोड़ पौण्ड का जुर्माना भी किया गया।

> "अगर कभी मैं किसी शत्रु पर हमला करना चाहूँगा तो मैं महीनों तक उसके साथ समझौते की बातचीत और तैयारी नहीं करूँगा, बल्कि वैसा ही करूँगा जैसा मैंने सदा किया है। अन्धकार से निकलूँगा और बिजली की तरह अपने शत्रु पर टूट पड़ूँगा।"
>
> —हर हिटलर

"बहुतों ने आत्महत्या कर ली; कितने भाग खड़े हुए। युगों के स्मरणातीत दुःखों के बोझ से झुके हुए शोकमग्न, असहाय, लाचार लोगों का एक बड़ा देश-त्याग। लम्बी क़तारों में चलते हुए—ऐसे

क़तारों में जिनका अन्त ही नहीं मालूम होता। पर ये कहाँ जायेंगे ?"

("दुनिया का रंगमंच" से)

नाज़ियों का न्याय

"क़ानून और अडोल्फ़ हिटलर की इच्छा, ये दोनों एक ही हैं।"
—गोरिंग

जर्मनी के पुलिस-विभाग के अध्यक्ष मार्शल गोरिंग के इस कथन से यह साफ़ ज़ाहिर है कि जर्मनी की पुलिस के हाथों नागरिकों की स्वतंत्रता की रक्षा कहाँ तक हो सकती है। बिना वारंट के किसी भी नागरिक के घर में पुलिस दाख़िल हो सकती है और उसकी तलाशी ली जा सकती है। किसी भी शख़्स को बिना वारंट के ही गिरफ़्तार भी किया जा सकता है और बिना सुनवाई किये ही उसे किसी मुद्दत तक नज़रबन्द (प्रोटेक्टिव कस्टडी) में रक्खा जा सकता है।

हिटलर के युग के शुरू होते ही सब पुरानी क़ानूनी धाराओं को रद कर दिया गया। नये क़ानूनों के अनुसार न तो अपराधों का ही निश्चित रूप है और न उनके लिए दी जानेवाली सज़ाओं का। मार्च सन् ३३ से 'अपराधी के इरादे और लक्ष्य' पर विचार किया जाता है। कोई अच्छा नाज़ी किसी 'मुसीबत में फँसकर' चाहे कुछ भी कर डाले, सब माफ़ हो सकता है। किसी दूसरे नागरिक का कार्य, चाहे वह कितना ही निर्दोष क्यों न हो, अपराध की श्रेणी में

रक्खा जा सकता है यदि अदालत को उस व्यक्ति के 'इरादों' के विषय में संदेह हो।

'जर्मन प्रतिष्ठा' की रक्षा के लिए अलग ही एक क़ानूनी मसविदा तैयार किया गया है। जर्मन-जाति का अपमान करना एक अपराध है, फ़्यूरर का अपमान करना एक अपराध है, सेना का अपमान करना एक अपराध है, नाज़ियों द्वारा स्वीकृत किये हुए किसी प्राचीन वीर पुरुष का अपमान करना एक अपराध है, वर्तमान नाज़ी नेताओं का अपमान करना भी एक अपराध है, डाक्टर डालफ़स के हत्यारे का अपमान करना भी एक अपराध है।

अक्तूबर १९३५ में नाज़ी न्यायमंत्री, डाक्टर फ्रैंक ने जजों की एक सभा में भाषण करते हुए कहा था—"पहले हम लोग न्याय करते समय अपने आपसे यह पूछा करते थे—'यह ठीक होगा या ग़लत ?' आज हम इस प्रश्न को इस तरह पूछते हैं—'फ़्यूरर क्या कहेगा' ?"

इसका अर्थ संक्षेप में यही हुआ कि न्यायाधीशों को वही करना चाहिए जो हिटलर चाहता हो क्योंकि "हिटलर की इच्छा और क़ानून एक ही हैं।"

राजद्रोह तथा षड्यन्त्रकारियों के मुक़दमे सुनने के लिए नई अदालत क़ायम हुई है जिसका नाम 'जनता की अदालत' (People's Court) रक्खा गया है। उसमें काम करनेवाले जजों में आधे से अधिक नवसिखिए, सेना के अफ़सर तथा नाज़ीदल की प्राइवेट सेना के कप्तान आदि हैं। यह अदालत बंद दरवाज़ों के



गेस्टापो का एक सिपाही

अन्दर बैठकर मुक़दमों का फ़ैसला करती है। मुल्ज़िम को अपना वकील आप चुनने की छूट नहीं होती। उसकी नियुक्ति सरकार अपनी ओर से करती है। वह अपनी एक छोटी-सी अपील में दया की प्रार्थना कर सकता है। उसके बाद की क़ानूनी कार्यवाहियों में उसका कुछ भी हाथ नहीं होता। यहाँ तक कि वह गवाहों से जिरह भी नहीं कर सकता। जजों के फ़ैसले की अपील हिटलर को छोड़कर किसी दूसरी ऊँची अदालत में नहीं की जा सकती।

गेस्टापो

नाज़ी सरकार जिन खम्भों की शक्ति पर खड़ी हुई है उनमें 'गेस्टापो' का विशेष स्थान है। यह सरकारी खुफ़िया पुलिस है। संसार के इतिहास—प्राचीन और वर्तमान—के पन्ने पलट जाइए। गुप्तचरों की इतनी ज़बरदस्त संस्था तथा उसके हाथ से होनेवाले ऐसे क्रूर अत्याचारों का वर्णन आपको कहीं पढ़ने को नहीं मिल सकता। गेस्टापो के कारनामों के विषय में कुछ लिखने से पहले हम उसके प्रधान हर हिमलर के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त कर लें।

हिटलर को उसके शत्रुओं से सदैव सतर्क रखनेवाला, समस्त जर्मनी और नाज़ीदल में अपनी शक्ति का सिक्का जमानेवाला, गेस्टापो का प्रधान हर हेनरिश हिमलर है।

"हिटलर के प्रधान पद ग्रहण करने पर, सन् १९३३ में हिमलर जर्मन पुलिस का प्रधान बनाया गया। उस समय उसकी

आयु केवल ३३ वर्ष की थी। वह बड़ा ही क्रूर, हिंसक, निर्दय और विरोधियों से बदला लेने में साक्षात् यमराज है। उसके बहु-संख्यक गुप्तचर देश के कोने-कोने में फैले हुए हैं, और कहीं भी कोई मनुष्य हिटलर या नाज़ी शासन के विरुद्ध गुप्त षड्यंत्र करने का साहस नहीं कर सकता।

उसी ने नाज़ीदल और सेना को विरोधियों से साफ़ किया था, और यहूदियों का आग और तलवार से संहार किया था। हिमलर म्यूनिक यूनिवर्सिटी का ग्रेज्युएट है, और गत महायुद्ध में उसने जर्मन सेना में भरती होकर काम किया था। सन् १९२३ में उसने हिटलर के पहले "धावे" में साथ दिया था, पर वह धावा निष्फल होने पर उसने आत्मसमर्पण किया और उस पर मुकदमा भी नहीं चलाया गया।

वह पहले हिटलर के डिप्टी (उपप्रधान नेता) ग्रिगोर स्ट्रेसर का प्राइवेट सेक्रेटरी था। पर सन् १९३४ में नाज़ीदल के विरोधियों का संहार हुआ तो हिमलर की आज्ञा से स्ट्रेसर को गोलियाँ मारी गईं।

हिटलर ने उसे पहले अपने 'बाडी-गार्ड' दल का संगठन करने के लिए नियुक्त किया था। उसने एक लाख सैनिकों का बढ़िया संगठन किया, जिनका सम्बन्ध हिटलर के 'बाडी-गार्ड' दल से था। हिटलर जब जर्मनी का चांसलर हुआ, तो उसके संकेत पर हिमलर ने खुफ़िया पुलिस का संगठन किया। सन् १९३३ में जर्मन पुलिस में १,३८,४७० मनुष्य थे, पर हिमलर ने उनकी संख्या

४,३७,००० तक पहुँचा दी, और आज उसके 'गेस्टापो' दल का जर्मनी भर में आतंक फैला है।

जर्मनी के प्रत्येक क्लब, कारख़ाने और अन्य महत्त्वपूर्ण स्थान तथा घर में उसके जासूस रहते हैं, यहाँ तक कि युद्धमंत्री, परराष्ट्र-मंत्री और अन्य मंत्रियों के दफ़्तरों में भी 'गेस्टापो' के आदमी बैठे रहते हैं और वे नित्य के समाचार अपने प्रधान हिमलर को देते हैं।

हिटलर की तरह हिमलर भी शराब या सिगरेट नहीं पीता, और न बदचलन स्त्रियों के साथ रहता है, पर जब अन्य लोग बदचलन स्त्रियों के साथ मौजें करते हैं तो हिमलर चुपचाप, और कभी-कभी भेष बदलकर, वहाँ मौजूद रहता है, उनकी बातें सुनता है और सब कुछ याद रखता है। सन् १९३४ में जब नाज़ीदल के विरोधियों की भीषण सफ़ाई हुई थी, तो उस समय हिमलर ने ही ३९७ संदिग्ध मनुष्यों के नाम चुपचाप हिटलर के पास भेज दिये थे, जिनमें से बहुतेरे मार डाले गये थे। हिमलर के ही इशारे से हज़ारों मनुष्यों को कराल कारावास की हवा खानी पड़ती है।

हिटलर को हिमलर का पूर्ण विश्वास है, और आज उसी के भरोसे हिटलर निर्द्वन्द्व होकर जर्मनी का सर्वेसर्वा बना हुआ है। हिमलर का शब्द क़ानून है, और उसका शब्द या विश्वासभंग करनेवाला यह जानता है कि उसे किस बुरी मौत मरना पड़ेगा।

हिमलर वास्तव में नाज़ीदल का चौथा नेता है—हिटलर,

गोरिंग और गोबेल्स के बाद ही उसका स्थान है। पर यह सत्य है कि यदि दैवयोग से हिटलर का पतन हो, तो कोई जर्मन नेता बिना हिमलर की सहायता के प्रधान पद नहीं प्राप्त कर सकता।"

(साप्ताहिक "भारत" से)

समय-समय पर हिटलर के जीवन का अन्त करने के लिए षड्यन्त्र होते रहते हैं। अभी थोड़े ही दिन हुए म्यूनिक में भी एक इसी तरह का षड्यन्त्र रचा गया था। हिटलर किसी सभा में भाषण देने के लिए गया था। साधारणतया जितनी देर तक वह भाषण दिया करता था उस दिन उसने कुछ समय पहले ही अपना भाषण समाप्त कर दिया और वह सभाभवन से चला गया। अतः षड्यन्त्रकारियों का गोला उस दिन बेकार गया। हिटलर बच गया, पर और कई लोगों की जानें गईं।

इस प्रकार की साज़िशें उसके ख़िलाफ़ होती ही रहती हैं। 'गेस्टापो' के कर्मचारी ऐसे अनेक षड्यन्त्रों का पता तक हिटलर को नहीं होने देते। ऐसे षड्यन्त्रों में से पहला, जिसने हिटलर को डरा दिया था, उस समय हुआ था जब कि वह गोरिंग की पहली पत्नी कैरिन का देहान्त होने पर उसकी अन्तिम क्रिया कराने के लिए उसके शव के साथ-साथ जा रहा था। अन्य लोगों के साथ जब वह धीरे-धीरे चल रहा था, किसी ने पेड़ के ऊपर से उस पर राइफ़ल का वार किया। भाग्य ने हिटलर का साथ दिया। गोली एक सैनिक के लगी जो उसके बराबर ही चल रहा था। दूसरी गोली चलने ही वाली थी कि हिटलर के अंगरक्षकों में से एक ने

दुन से ऊपर को गोली मारी और राइफ़ल-धारी अपनी राइफ़ल-समेत पट से ज़मीन पर आ गिरा।

हिटलर की रक्षा करने के लिए, हत्यारों का पता लगाने के लिए गेस्टापो के २००००० काली वर्दीवाले खुफ़िया सिपाही रात-दिन तत्पर रहते हैं। हिटलर का सही-सलामत रहना इन लोगों की सतर्कता, चालाकी तथा निर्दयता पर बहुत कुछ निर्भर है।

यही 'गेस्टापो' हिटलर की यात्राओं तथा आवागमन का प्रबन्ध करती है। प्रस्थान करने के बहुत दिन पहले से ही हज़ारों सिपाहियों की तैनाती हो जाती है। ये लोग रास्ता साफ़ रखते हैं। हर नगर या ग्राम को, जिसमें होकर 'फ़्यूरर' की सवारी जानी होती है, छान डाला जाता है। ऐसे सब लोगों पर, जिन पर ज़रा भी शुबहा होता है, कड़ी नज़र रक्खी जाती है।

२००००० एस० एस० सैनिक रिजमेंटों में बँटे हुए हैं। ये जर्मनी के भिन्न-भिन्न भागों में फैली हुई हैं। इनका यह काम होता है कि स्थानीय पुलिस की देख-रेख करते रहें और यह देखते रहें कि बर्लिन से मिलनेवाली समस्त आज्ञाओं का अक्षरशः पालन हुआ या नहीं।

जब कभी 'फ़्यूरर' किसी तरफ़ होकर गुज़रता है तो सारा रिजमेंट का रिजमेंट व्यस्त हो जाता है। एक-एक मकान की तलाशी ले ली जाती है। होटल के मैनेजरों को भी तलाशी के बाद यह आज्ञा दे दी जाती है कि वे अपने यहाँ किसी और व्यक्ति को तब तक न टिकायें जब तक कि 'फ़्यूरर' की सवारी उधर होकर न गुज़र

जाय। नगर की इमारतों और मकानों में रहनेवाले प्रत्येक नागरिक को दूसरे नागरिक की निगरानी करनी पड़ती है। इन दोनों पर किसी तीसरे की नज़र लगी रहती है।

'फ़्यूरर' की सवारी के आते ही 'गेस्टापो' के आदमी आकाश में विलीन हो जाते हैं। कोई किसी मकान की छत पर जा बैठता है और कोई किसी पेड़ की डालियों में जा छिपता है। इनमें से हरएक के पास दूरबीन लगे हुए राइफ़ल होते हैं। इन्हें यह आज्ञा मिली होती है कि जब कोई व्यक्ति संदेह उत्पन्न करनेवाली गति करे तुरन्त उसी क्षण उसे गोली मार दो। किसी बेक़सूर की जान भले ही चली जाय पर क़ातिल हाथ से न निकल जाय।

जलूस की सवारी के जाते समय पुलिस की क़तार का मुँह भीड़ की तरफ़ होता है। खड़े हुए नर-नारियों पर इन लोगों की कड़ी नज़र रहती है। यदि कोई व्यक्ति कुछ निकालने के लिए भी अपनी जेब में हाथ डालता है तो पुलिस का सिपाही झपटकर उसके पास पहुँच जाता है।

निर्दिष्ट स्थान पर पहुँच जाने पर हिटलर भाषण देने की तैयारी करता है। जब वह अपनी मोटर में से उतरता है, उस समय बड़ी सावधानी रक्खी जाती है। जब तक दर्जनों एस० एस० सैनिकों की पंक्तियाँ उसके चारों ओर आकर खड़ी न हो जायँ वह अपनी मोटर में ही रहता है। किसी को भी पन्द्रह गज़ से ज़्यादा नज़दीक नहीं आने दिया जाता।

यह कहा जा सकता है कि 'गेस्टापो' का कोई भी आदमी, यदि



हिटलर का जलूस
अंग-रक्षकों और गेस्टापो के सिपाहियों का गिरोह चारों ओर से घेरे चल रहा है।

वह चाहे तो, हिटलर की जान ले सकता है। हिटलर को भी हर दम मृत्यु का खटका लगा रहता है और वह किसी का विश्वास नहीं करता। 'गेस्टापो' स्थानीय पुलिस-विभाग की निगरानी करती है। 'गेस्टापो' की निगरानी हिटलर के निजी अंगरक्षकों की १२००० सेना करती है।

इस सेना के लिए सैनिकों की भर्ती नाज़ीवाद के कट्टर अनुयायी ६ फ़ीट या इससे भी लम्बे क़द के नौजवानों में से की जाती है। 'अवसर पड़ने पर 'फ़्यूरर' के लिए मैं अपनी जान तक दे दूँगा'— हरएक को यह प्रतिज्ञा करनी पड़ती है। और ये सचमुच इसके लिए तैयार रहते हैं। 'गेस्टापो' के सिपाहियों की तरह ये लोग भी काली वर्दी पहने रहते हैं। अंगरक्षकों की इस सेना को 'लीबस्टेन्डार्ट के नाम से पुकारा जाता है। इसका अध्यक्ष जोसफ़ डिट्रिव नाम का नाज़ीदल का एक दूसरा नेता है।

यह उन इने-गिने थोड़े से व्यक्तियों में से है जिनका हिटलर को विश्वास है। पर नज़र उस पर भी रक्खी जाती है।

नाज़ीदल के लोग 'गेस्टापो' के कार्यक्षेत्र से बाहर हैं।

शिक्षा-प्रणाली

मार्क ब्रेन्डनबर्ग का एक स्कूल। ड्रिलमास्टर का घंटा आया। बच्चे क़तारों में खड़े हो गये। ड्रिल होनी शुरू हुई। मास्टर ने देखा कि बच्चे वह फ़ुर्ती नहीं दिखा रहे जो होनी चाहिए। उसने कड़ाई के साथ कहा—

"कैसे विश्वास किया जा सकता है कि तुम लोग अगली लड़ाई

में पोलों को हरा सकोगे अगर तुम इस उम्र में अपने पुट्ठों को मज़बूत न बनाओगे ?"

× × ×

जर्मन-जाति सदैव से विद्वानों की जाति रही चली आई थी। विदेशों की विद्याओं के प्राप्त करने में भी उन्होंने असाधारण परि-श्रम किया था। वेदों के सुप्रसिद्ध ज्ञाता मैक्समूलर का नाम कौन पढ़ा लिखा भारतवासी नहीं जानता ? तब बात दूसरी ही थी। विश्व-विद्यालय और स्कूलों की शिक्षा में राज्य की ओर से हस्तक्षेप न होता था। वे 'सत्य की खोज सत्य के लिए' करने में तत्पर रहा करते थे। किसी प्रोफ़ेसर को कोई यह बताने का स्वप्न में भी विचार न कर सकता था कि वह क्या पढ़ाये और कैसे। विलियम क़ैसर तक के दिमाग़ में भी कभी यह बात न आई थी। पर हिट-लर के ज़माने में यह दशा बिल्कुल बदल दी गई।

किसी राष्ट्र का भावी स्वरूप क्या हो, यह बहुत कुछ उसकी शिक्षा-प्रणाली पर निर्भर है। हिटलर ने इसे भली भाँति समझ लिया था। अपनी पुस्तक 'माइन काम्फ़' के 'राज्य' नामक अध्याय में उसने साफ़-साफ़ नाज़ी शिक्षा-प्रणाली की रूप-रेखा खींची है। वह बच्चे को राष्ट्र की मूल्यवान् सम्पत्ति स्वीकार करता है। उसके नज़दीक "शिक्षा का अर्थ है, फ़ौज़ी तालीम। राज्य को उसे इस प्रकार की शिक्षा देने में पूरा बल लगा देना चाहिए। यह बल उसको विद्वान् बनाने में न लगाकर उसके शरीर को बलवान् बनाने में लगाना चाहिए। मानसिक बल तो दूसरी श्रेणी की आवश्यकता

है।" अब देखना चाहिए हिटलर के देश में यह शिक्षा कैसे दी जाती है।

बच्चे के पैदा होते ही माँ-बाप के ऊपर उसके पालन-पोषण के सम्बन्ध में पाबन्दियाँ लगा दी जाती हैं। उन्हें बच्चे का ऐसा नाम रखने की भी मुमानियत है जिसमें यहूदीपन की बू आती हो। 'जोशुआ' जैसे नाम नहीं रक्खे जा सकते। डीट्रिश, ओटो या सीगफ्रेड आदि ऐसे नाम होने चाहिएँ जिनसे शुद्ध जर्मन होना प्रकट हो। इसके साथ ही यह भी है कि यहूदी लोग अपने बच्चों के नाम जर्मन नामों पर नहीं रख सकते।

६ वर्ष की आयु का होते ही बच्चे को सरकारी स्कूल में दाखिल कराना पड़ता है। तभी से बच्चे का नाज़ी विचारों में ढलना शुरू हो जाता है। सच तो यह है कि उसी समय से वह छोटा पर पक्का नाज़ी बन जाता है। उसे नाज़ी गीत गाना सिखाया जाता है, 'हाइल हिटलर' कहकर लोगों को प्रणाम करना सिखाया जाता है; स्वस्तिका का फहराना सिखाया जाता है और 'जर्मनी जाग' तथा 'हथियार उठाओ' आदि के नारे लगाना सिखाया जाता है।

स्कूलों में 'माइन काम्फ़' अनिवार्य पाठ्य-पुस्तक की तरह पढ़ाई जाती है। इतिहास और भूगोल की पढ़ाई और देशों की तरह नहीं होती। इतिहास में युद्ध के गुणों का बखान किया जाता है तथा फ्रेडरिक महान्, बिस्मार्क तथा हिंडनबर्ग की वीरता के क़िस्से सुनाये जाते हैं। इनके अलावा गत यूरोपीय महायुद्ध के विषय में जो नाज़ियों की धारणाएँ हैं, वे भी बच्चों के मस्तिष्क में बिठाई

जाती हैं और बच्चों को वर्साई की संधि की शर्तों का ज्ञान क…
जाता है।

हिटलर और शिक्षा के विषय में भाषण करते हुए एक…
जर्मनी के शिक्षा-मंत्री डाक्टर रस्ट ने कहा था—

"परमात्मा स्वर्ग में रहता है। उसने हमारे बीच में अडो…
हिटलर को, आदमी के रूप में (किसी दैवी शक्ति को) हमा…
जाति के पुनर्निर्माण के लिए भेजा है। हे हिटलर, हम अपने…
समाज को इस प्रकार शिक्षा देंगे कि वह तुम्हारे चरण-कमलों…
अनुसरण करेगा, तुम्हारी बनाई हुई विचारधारा पर चलेगा…
तुम्हारी ही इच्छाओं को पूर्ण करेगा।"

भूगोल की शिक्षा में भी वही संकुचित दृष्टिकोण रक्खा ग…
है। भाषा, विज्ञान, भूगोल और इतिहास सब विषयों की शिक्षा…
उद्देश्य यह है कि बच्चों में युद्ध के प्रति प्रेम उत्पन्न किया जाय…
उनकी हिंसा-प्रवृत्ति को उत्तेजना दी जाय। हिटलर का इस वि…
में खुद कहना है—

"हम फिर एक हथियारबन्द जाति बनना चाहते हैं। बच्चों…
पढ़ाये जानेवाली प्राइमर से लेकर हरएक चीज़ को हमें इस ओ…
की पूर्ति में लगा देना चाहिए।"

बच्चों की प्राइमर से लेकर स्कूल के विद्यार्थियों तक के लिए…
पुस्तकें तैयार की जाती हैं उन सबमें युद्ध-सम्बन्धी विषयों…
भरमार रहती है। बच्चों की प्राइमर को ही ले लीजिए। ऊपर…
मुख-पृष्ठ पर कुछ बच्चे सैनिक वर्दी पहने हुए मार्च कर रहे…

अन्दर पढ़ने-लिखने का मसाला तो कम है पर चित्र अधिक हैं। प्रत्येक चित्र का सम्बन्ध या तो हिटलर के जीवन से है या सैनिकों के जीवन से या युद्ध में काम आनेवाले किसी हथियार से। चित्र के नीचे बच्चों द्वारा गाये जानेवाले गीतों के रूप में उनका वर्णन भी लिखा रहता है। अत: जब बच्चा इस प्राइमर को ख़तम कर चुकता है तो उसे हिटलर और युद्ध के विषय में कुछ न कुछ बातें ज़रूर मालूम हो जाती हैं।

बर्लिन विश्वविद्यालय के डाक्टर बोयर ने शिक्षा का तरीक़ा बतलाते हुए एक बार कहा था—

"हमारी इस फ़ौजी तैयारी में स्कूल और शिक्षक हथियारों से अधिक लाभदायक हैं। शिक्षक को तरीक़े से और जोश के साथ वे बातें, जिन्हें हिटलर अपने भाषणों में प्रदर्शित करता है, उन्हें विद्यार्थियों में भर देना चाहिए। इतिहास व भूगोल दो विषय ऐसे हैं जिन्हें प्रत्येक विद्यार्थी को भली भाँति समझ लेना चाहिए। उसे जर्मनी की मौजूदा हालत को न सिर्फ़ ज्ञान के लिए ही बल्कि कार्यात्मक जीवन के लिए समझ लेना चाहिए।"

पुस्तकों का नामकरण भी विशेष ढंग से होता है—"फ़ौजी रक्षा के लिए भौतिक विज्ञान का ज्ञान", "फ़ौजी रक्षा के लिए भूगोल" आदि। १९३६ के बाद जो पाठ्य-पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं, उन पर लिखा रहता है—"इस पुस्तक के अन्दर जो लिखा है वह युद्धमंत्री द्वारा स्वीकृत है।"

भूगोल पढ़ाने के लिए एटलसों में ऐसे नक़्शे मिलेंगे जिनमें ये

सब भाग दिखाये गये हैं जहाँ जर्मन लोग बसे हुए हैं और [illegible] जर्मनी को अपने अधिकार में कर लेना है। गणित की पुस्त[illegible] में प्रश्नावली का रूप है—"एक बम फेंकनेवाला जहाज़ यदि [illegible] में २८० किलोमीटर की चाल से चले और रात में २४० कि[illegible] मीटर की चाल से चले और उसे म्यूनिक से स्ट्रेसबर्ग जाना हो [illegible] उसे वहाँ पहुँचने में कितना समय लगेगा ?" या "यदि एक [illegible] गिरानेवाला जहाज़ एक मिनट में इतने बम के गोले गिरा[illegible] हैं तो इसी तरह के १० जहाज़ १५ मिनट में कितने [illegible] गिरायेंगे।"

'माइन काम्फ़' में हिटलर ने जर्मनों की शिक्षा का वर्णन [illegible] हुए लिखा है—"उनकी कुल शिक्षा इस क़िस्म की होनी चा[illegible] कि उनके अन्दर यह विचार दृढ़ हो जाय कि संसार में उनसे [illegible] और कोई नहीं है।" जर्मनी में इतिहास की जो पुस्तकें प[illegible] जाती हैं उनमें जाति-भेद पर बड़ा ज़ोर दिया जाता है। सारे इ[illegible] हास को नाज़ीदल की नीति और सिद्धान्तों के रूप में ढालने [illegible] कोशिश की जाती है। इतिहास की पुस्तकों में 'वेमार प्रजातंत्र' [illegible] वर्णन आने पर अध्यायों के शीर्षक होते हैं—"अवनति के [illegible] वर्ष", "अपमान के १४ वर्ष", "मार्क्सवाद के १४ वर्ष", "[illegible] प्रजातंत्र के १४ वर्ष" आदि-आदि।

जो कुछ स्कूलों में पढ़ाया जाता है, घर पर माता-पिता [illegible] कहीं उसके कुछ प्रतिकूल बतला दें और कहीं "छोटा नाज़ी" [illegible] दिन स्कूल में कह उठे—'लेकिन मेरे माता-पिता तो कहते थे...

तो इसका अर्थ हो जाता है माता-पिता के लिए या तो 'गेस्टापो' या फिर 'कंसेन्ट्रेशन कैम्प'—नज़रबन्दों का कारागार।

घर पर धार्मिक शिक्षा नहीं दी जा सकती। ईसाइयों के धार्मिक ग्रंथ बाइबिल का भी नया संस्करण—नाज़ी संस्करण—तैयार कराया गया है। गिरिप्रवचन में महात्मा ईसा ने कहा—"नम्र पुरुष धन्य हैं, वे भूमि के स्वामी बनेंगे" इसको नये बाइबिल में यों समझाया गया है—"वह सुखी है जिसको अच्छा साथी मिल गया, वह संसार में कुछ करके रहेगा।" कहने की ज़रूरत नहीं कि वह 'अच्छा साथी' हिटलर ही है। वास्तव में हिटलर 'दूसरा ईसा' है! स्कूल में शिक्षा पानेवाला 'हिटलर युवक' बड़े गर्व से गाता है—

'ईसामसीह को पड़ा रहने दो, हिटलर युवक को आगे बढ़ने दो।'

पढ़ाई-लिखाई से बच्चे का जो समय बचता है वह 'नाज़ी-बालचर-मंडल' के कार्यों में ख़र्च हो जाता है। प्रत्येक 'हिटलर युवक' के लिए १ दिसम्बर १९३६ से इस संस्था में शामिल होना ज़रूरी है। १४ वर्ष से लेकर १८ वर्ष की आयु तक विद्यार्थी 'हिटलर युवक' रहता है। १९ वर्ष की उम्र का होने पर उसे ६ महीने सरकारी काम (Labour Service) करना पड़ता है। तत्पश्चात् २ वर्ष तक फ़ौजी ट्रेनिंग में रहना पड़ता है। चाहे वह इसके बाद विश्वविद्यालय में नाम लिखाये, कारबार में लगे या मेहनत-मज़दूरी करे यह उसकी मर्ज़ी रही। पर उसे 'एस. ए.' 'एस. एस.' 'नेशनल ट्रेड यूनियन' या और किसी ऐसी संस्था का सदस्य ज़रूर

बन जाना चाहिए जिस पर राज्य का नियंत्रण हो । ३५ वर्ष की आयु का होने पर उसे 'रिज़र्विस्ट' होना पड़ता है और ४५ वर्ष का होने पर उसे 'लेन्डस्टूम' के सदस्यों में नाम लिखाना पड़ता है।

जर्मनी के तीसरे साम्राज्य में किसी नौजवान की उन्नति अथवा अवनति का आधार उसका काम नहीं है, वरन् उसकी शारीरिक शक्ति है। जिन विद्यार्थियों में यह गुण पाया जाता है और साथ ही साथ उनकी सूरत-शक्ल भी 'आर्यों'-जैसी हो, उनको उच्च शिक्षा के लिए चुन लिया जाता है। यह उच्च शिक्षा या तो १५ 'नेपोलिस' स्कूलों में दी जाती है या ३२ 'अडोल्फ़ हिटलर' बोर्डिंग स्कूलों में। २४ या २५ वर्ष की आयु प्राप्त करने तक यह विद्यार्थी अपनी फ़ौजी ट्रेनिंग भी ख़तम कर चुकते हैं और उनकी शादी भी हो चुकती है। इस शिक्षा के समाप्त होने पर फिर-उनका चुनाव 'लीडर कालिज' की शिक्षा के लिए होता है। जर्मनी में ऐसे 'लीडर कालिज' कुल ३ हैं। यहाँ उन्हें ३ १/२ वर्ष तक 'लीडरशिप' (नेतृत्व) तथा नाज़ीवाद के सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाती है और फ़ौजी क़वायद तथा खेल वग़ैरा सिखाये जाते हैं। आखिरी ६ महीने ही उस शिक्षा के लिए दिये जाते हैं जिन्हें साधारणतया अन्य देशों में शिक्षा के नाम से पुकारा जाता है। यहाँ से निकले हुए यही लोग नाज़ी जर्मनी के कर्णधार बनते हैं।

परीक्षा के समय प्रत्येक उम्मेदवार का 'पार्टी रिकार्ड' देखा जाता है। गणित, भाषा या विज्ञान में उसके नम्बर भले ही कम हों, यदि उसने 'हिटलर युवकदल' या एस. एस. में अच्छा काम किया

है और 'माइन-काम्फ़' के पन्नों का उसे काफ़ी अच्छा ज्ञान है तो उसकी सफलता निश्चित है। जर्मनी के विश्वविद्यालयों के वे प्रोफ़ेसर जिन्होंने जर्मनी के विश्वविद्यालयों में हिटलर-युग के पहले से काम किया है, प्रायः दबे-दबे स्वर में मौजूदा ग्रेजुएटों में ज्ञान की कमी की शिकायत किया करते हैं। पर इसे सुनता कौन है ? हम पहले ही लिख चुके हैं कि जर्मनों को शिक्षित बनाने में नेता का उद्देश्य ही दूसरा है।

समाचारपत्र

जर्मनी में समाचारपत्रों को सिर्फ़ 'सेन्सर' ही नहीं किया जाता। न सिर्फ़ सरकार द्वारा जो लिखा जा चुका है वही 'सेन्सर' किया जाता है, बल्कि क्या लिखा जाय और उसे कौन लिखे यह सब भी सरकारी अधिकारी ही निश्चित करते हैं। अख़बारों में हिस्सा रखनेवालों को अपनी स्त्री-समेत यह सिद्ध करना पड़ता है कि वे शुद्ध आर्य हैं और उनका परिवार भी १८०० से लेकर विशुद्ध रूप से आर्य-परिवार रहा है। केवल आर्य ही, जो आर्य-घरानों में ही ब्याहे हों, पत्रकार या सम्पादक हो सकते हैं।

जब हिटलर चांसलर हुआ था तो १८४ समाजवादी तथा कम्यूनिस्ट अख़बारों का प्रकाशन बन्द करा दिया गया और उनका प्रेस तथा सम्पत्ति भी ज़ब्त कर ली गई थी। एक वर्ष के अन्दर ही १४२२ ग़ैर नाज़ी-पत्रों को भी बन्द होना पड़ा। १९३३ के बाद से नाज़ीदल के दिवालिये पत्र भी मालामाल हो गये हैं।

पत्रों के सम्पादकों के पास नित्य सैकड़ों तार प्रचारमंत्री के यहाँ से आते रहते हैं, जिनमें न सिर्फ़ प्रकाशन करने के लिये 'मैटर' दिया रहता है, वरन् उसको किस ढंग से, कहाँ प्रकाशित किया जाय, इस बात की भी पूरी-पूरी हिदायतें रहती हैं। शीर्षकों की पंक्तियाँ भी वहीं से लिखी आती हैं। एक अभागे सम्पादक ने एक दिन यह सब मसाला एक विदेशी पत्रकार को दिखला दिया। उसे जीवन भर के लिये कारावास का दंड मिला।

एक सम्पादक को एक लेखक के रद्दी लेख सपुरस्कार प्रकाशित करने को विवश किया गया, क्योंकि उसने नाज़ीदल के शुरू के दिनों में दल की उन्नति के लिए बड़ा काम किया था।

वाहर के समाचार जर्मनी में न आ पायें, इसके लिए अनेक विदेशी पत्रों पर प्रतिबन्ध लगा हुआ है। रेडियो पर भी ऐसे देशों के प्रोग्राम नहीं सुने जा सकते, जिनकी प्रचारमंत्री गोएबेल्स की ओर से मुमानियत है। गलियों में प्रचारविभाग के कर्मचारी चक्कर लगाते रहते हैं। अगर कोई वर्जित प्रोग्राम को सुनता हुआ पाया जाता है तो फ़ौरन् उसकी रिपोर्ट होती है और उसके ख़िलाफ़ अदालती कार्रवाई की जाती है।

हरएक नागरिक नाज़ी-समाचार सुन सके, इसके लिए भी बड़ा उद्योग किया जाता है। प्रत्येक नगर, गाँव-गाँव तथा अन्य सार्वजनिक स्थानों में रेडियो सेट तथा लाउड स्पीकर लगे हुए हैं। एक सस्ते सेट की भी तैयारी हो रही है, जिसका ख़रीदना प्रत्येक नागरिक के लिए ज़रूरी कर दिया जायगा।

जर्मनी की स्त्रियाँ

नाज़ी-शासन के प्रति जर्मनी की स्त्रियों में बड़ा क्षोभ है। सच बात तो यह है कि यहूदियों के बाद नाज़ी-शासनचक्र का शिकार स्त्रियों को ही बनना पड़ा है।

अभी हाल ही की बात है। जर्मनी के परराष्ट्रमंत्री हरवान रिबेनट्रॉप बर्लिन में महिलाओं की एक सभा में भाषण कर रहे थे। भाषण का विषय था—"स्त्री, हैट, और पोशाक"। दर्शक स्त्रियों की भीड़ में रोष की लहर फैल गई। ज़ोरों के साथ उनके विरुद्ध नारे लगाये जाने लगे। देखते-देखते वह सभा-भवन दंगे के स्थल के रूप में परिणत हो गया। पुलिस बुलाई गई। हरवान रिबेनट्रॉप का भाषण अधूरा ही रह गया। किसी तरह से वह पुलिस की निगरानी में सभा-स्थल छोड़कर बाहर निकले।

एक दूसरी सभा में उनको फिर उग्र स्त्रियों की भीड़ का सामना करना पड़ा। वहाँ पर स्त्रियाँ ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रही थीं—"तुम लोगों ने हमारे पतियों को छीन लिया है।"

जर्मनी के नाज़ी नेता यह स्पष्ट शब्दों में घोषित करते हैं कि स्त्रियों का मुख्य कर्तव्य घरेलू काम-काज करना है। उनका यही काम है कि वे बच्चे पैदा करें, गिरजाघर जायँ, और रसोई तैयार करें। इसके आगे बढ़ने का उनको कोई अधिकार नहीं।

एक बार हिटलर से यह प्रश्न पूछा गया कि आपने स्त्रियों के लिए क्या किया है। इस पर उसने उत्तर दिया—"मैंने नई (नाज़ी) सेना के द्वारा आपको ऐसे सैनिक दिये हैं जो समस्त संसार में

सर्वोत्तम बालकों के पिता प्रमाणित होंगे। मैंने जर्मनी की स्त्रियों के लिए यही किया है।"

नाज़ी-शासन के अन्दर स्त्री-शिक्षा का कितना अधिक ह्रास हुआ है, इसका अन्दाज़ विश्वविद्यालयों के आँकड़ों से लगता है। हिटलर के शासनाधिकार प्राप्त करने के पूर्व जर्मन-विश्वविद्यालयों से १६,४०० स्त्रियों ने मेट्रीकुलेशन-परीक्षा का सार्टिफ़िकेट प्राप्त किया था। किन्तु सन् १६३५-३६ में उस परीक्षा में उत्तीर्ण होनेवाली स्त्रियों की संख्या केवल ६,७०० थी। इससे यह स्पष्ट है कि हिटलर के शासन-काल में स्त्री-शिक्षा में ५० प्रतिशत अवनति हुई है। सन् १६३३ में ट्यूबिनजेन में १४ महिलाएँ क़ानून की शिक्षा प्राप्त कर रही थीं। सन् १६३४ में उनकी संख्या ४ थी और सन् १६३६ में क़ानून की शिक्षा प्राप्त करनेवाली केवल एक ही महिला थी। अभी हाल ही में जर्मन-स्त्रियों को सभा-सोसाइटियों में भाग लेने तथा सार्वजनिक जीवन व्यतीत करने से वंचित कर दिया गया।

नाज़ी-शासन में जर्मन-स्त्रियों को सर्वथा प्रकट रूप से विवाह और गृह-काज के बन्धनों में कस दिया गया है। एक बार हर हेस ने कहा था कि जर्मनी यह चाहता है कि स्त्रियाँ माताएँ बनें। नाज़ी-दल इस बात का विरोधी है कि स्त्रियाँ किसी पेशा या व्यवसाय में प्रवेश करें।

लेवज़िग के एक नाज़ी प्रोफ़ेसर अर्नस्ट ने "मातृत्व की भावना और उसका परिज्ञान"-शीर्षक एक निबन्ध लिखा है।

उस लेख में उन्होंने कहा है कि जीवन-पर्यन्त एकपत्नीव्रत

धारण करना हठ है और वह हमारी जाति के लिए घातक होगा। यदि कहीं एकपत्नीव्रत की प्रणाली वस्तुतः प्रचलित हो जाय तो फिर जाति की अधोगति निश्चित है। विवेक के आधार पर निर्मित प्रत्येक राष्ट्र की एक ऐसी नारी को, जो संतानवती नहीं है, अमर्यादित समझना पड़ेगा। इस समय ऐसे बहुत काफ़ी युवक हैं जो कुमारियों तथा स्त्रियों से विवाह करने के लिए तैयार हैं। सौभाग्य से एक अच्छे कुल का युवक २० लड़कियों को संतुष्ट करने की क्षमता रखता है। जीवन-भर एकपत्नीव्रत धारण किये रहना प्रकृति के विरुद्ध है। और यदि एकपत्नीव्रत की मूर्खतापूर्ण भावना का लोप हो जाय तो जहाँ तक लड़कियों का सम्बन्ध है, वे प्रसन्नता-पूर्वक अधिक बच्चे पैदा करने की माँग को स्वीकार कर लेंगी।

रोटी की जगह बम का गोला

रोटी की जगह बम का गोला

ना कुछ देखा नेम-धरम में, ना कुछ देखा पोथी में।
कहें 'कबीर' सुनो भाई साधो, जो कुछ देखा सो रोटी में॥

—कबीर

"जो धन नागरिकों के लिए मक्खन मोल लेने में ख़र्च किया जाय इससे अच्छा यह है कि उसे बम के गोलों की तैयारी में लगाया जाय। पहली चीज़ पर ख़र्च करने से केवल एक नागरिक तन्दुरुस्त हो पाता है, पर दूसरी वस्तु पर ख़र्च करने से तो सारी जाति की जाति शक्तिशाली बनती है।"

—मार्शल गोरिंग

पहले जो कुछ लिखा जा चुका है उससे यह तो साफ़ तौर से समझ में आ गया होगा कि जर्मनी ने पिछले पाँच-छः वर्ष अपनी सैनिक शक्ति को बढ़ाने में ख़र्च किये हैं। अनाप-शनाप द्रव्य

शस्त्रीकरण और युद्ध का सामान मोल लेने में खर्च किया गया है। नीचे के अंकों से यह बात स्पष्ट हो जायगी—

जर्मनी का शस्त्रीकरण का खर्च

(१०००००००००—एक अरब—मार्कों में)

१९३२	१.०
१९३३	३.०
१९३४	५.५
१९३५	१०.०
१९३६	१२.६
१९३७	१५.०

कुल सरकारी आमदनी का कौन-सा भाग शस्त्रीकरण पर खर्च होता रहा है, इसका पता नीचे की तालिका से लगेगा:—

१९३२	२ फ़ीसदी
१९३३	६ ,, ,,
१९३४	११ ,, ,,
१९३५	१८ ,, ,,
१९३६	२० ,, ,,
१९३७	२२ ,, ,,

किसी भी देश की सरकार के पास अपनी निजी पूँजी कोई नहीं होती। उसका जितना भी व्यय होता है वह सब नागरिकों की ही गाढ़ी कमाई का पैसा होता है। जिस सरकार का जितना अधिक खर्चा होगा उसी हिसाब से उस देश के निवासियों की आमदनी

कम हो जाती है। अपने खर्चों के लिए भिन्न-भिन्न देशों की सरकारें भिन्न-भिन्न तरीक़ों से अपने देशवासियों से यह धन निकालती हैं। इनमें से कर लगाना आमदनी का एक ज़बरदस्त ज़रिया समझा जाता है।

जर्मनी की सरकार ने या यों कहिए कि हिटलर की सरकार ने शस्त्रीकरण पर इतना द्रव्य खर्च करने के लिए रुपया कहाँ से पाया? कर और क़र्ज़—इन्हीं दो शब्दों में इस प्रश्न का उत्तर है। १९३७-३८ में सरकार ने कर की मद में प्रजा से १९३२ से कई गुना कर वसूल किया। लम्बी मुद्दत के लिए सरकार को क़र्ज़ देने के लिए धनी लोगों को मजबूर किया गया। इस प्रकार १९३२ और १९३७ के व्यय में जो १४ अरब का अन्तर है, उसका १०½ अरब मार्क के क़रीब तो इस प्रकार से वसूल हो गया। शेष ३½ अरब मार्क की रक़म में से कुछ तो रेलवे से क़र्ज़ ले ली गई और कुछ बेकारी के बीमे के फ़ंड से मिल गया।

युद्ध का खर्चा

पिछली लड़ाई में जर्मनी का युद्ध का सालाना खर्चा ३५,०००,०००,००० मार्क था। अब जो लड़ाई जर्मनी ने शुरू की है उसके लिए उसे कम से कम ५०,००१,०००,००० मार्क सालाना का इन्तज़ाम करने की फ़िक्र है। १९१४-१८ के मुक़ाबले में आजकल बारूद का भाव महँगा है और जर्मन सैनिक को पहले की अपेक्षा वेतन भी ज़्यादा मिलता है।

जब पोलैण्ड से लड़ाई शुरू हुई थी तो जर्मन नेताओं का विचार था कि आय-कर को ड्योढ़ा कर देने से और तम्बाकू, शराब तथा

पिछले महायुद्ध के मरे हुए और घायलों की संख्या

मृतसैनिक (जिनका पता है)	१,००,००,०००
सैनिक जिनके बारे में समझा जाता है कि मारे गये	३०,००,००,०००
ग़ैर-सैनिक जो मारे गये	१,३०,०००
ज़ख़्मी	२,००,००,०००
क़ैदी	३०,००,०००
लड़ाई के अनाथ	९०,००,०००
लड़ाई की विधवाएँ	५०,००,०००
देश छोड़कर भागे हुए	१,००,००,०००

(पं० जवाहरलाल नेहरू की "विश्व इतिहास की झलक" से)

वर्तमान युद्ध जो हिटलर की साम्राज्य-लिप्सा के कारण छिड़ा हुआ है देखा ही जाय कि इसमें मानव-सभ्यता की क्या दशा होती है।

दूसरी नशीली चीज़ों पर टैक्स बढ़ा देने से काम चल जायगा। उस समय लड़ाई के लिए २५,००,००० सैनिकों की ही भर्ती काफ़ी समझी गई थी क्योंकि उन्हें आशा थी कि लड़ाई जल्दी ही खतम

हो जायगी। यह आशा निर्मूल सिद्ध होती देखकर अब सब मिला-कर ४,५००,००० सैनिक युद्ध के लिए तैयार किये गये हैं।

जर्मनी की सरकार की कुल आमदनी २२,०००,०००,००० मार्क सालाना है। अब युद्ध के लिए ५०,०००,०००,००० मार्क की और ज़रूरत पड़ेगी। आय-कर पहले ही से ड्योढ़ा है। अतः वहाँ गुंजाइश नहीं है। पुनः रेलों से क़र्ज़ा लिया जायगा और व्यापार की वस्तुओं पर चुंगी बढ़ाई जायगी। इनके अलावा एक तरीक़ा और भी काम में लाया जा रहा है जो जर्मनी के अर्थमंत्री डाक्टर फ़ंक की सूझ है। सब यहूदियों को अपना रुपया बैंक में ज़मा करने को विवश किया गया है। इस रक़म पर कोई सूद न मिलेगा। हाँ, ३०० मार्क तक मासिक ख़र्च के लिए निकाला जा सकता है।

मज़दूरों की दशा

शस्त्रीकरण के ख़र्चें के प्रभाव से सर्वसाधारण भी बच नहीं सकते। मज़दूर, मिलमालिक और किसान सभी को कमा-कमाकर नाज़ी सरकार की ख़र्चीली नीति का पेटा भरना पड़ रहा है। उन्हें ऐसा करने के लिए विवश किया जाता है। इनमें से प्रत्येक को एक प्रणालीविशेष के अनुसार काम करना पड़ता है।

पहले मज़दूरों को ही ले लीजिए। यह सच है कि जर्मन मज़दूर को सवेतन छुट्टियाँ मिलती हैं। उसके मनोविनोद के भी साधन जुटाये गये हैं। किन्तु उनकी ट्रेड यूनियनें मिटा दी गई हैं और उनका

रुपया भी सरकार के पेट में चला गया। यदि मज़दूरों को मालिक से शिकायत हो तो हमारे देश की तरह वह हड़ताल नहीं कर सकते।

हिटलर का यह कहना है कि उसने जर्मनी से बेकारी को उखाड़ कर फेंक दिया है। कैसे ? मज़दूरी पेशावाले यहूदियों और स्त्रियों को उनकी जगहों से हटाकर निकाल दिया गया है। दूसरे निठल्ले अफ़सरों की तादाद बढ़ा दी गई है। हिसाब लगाया है कि प्रत्येक ८ आदमियों में से एक ज़रूर अफ़सरी की वर्दी पहनता है। यही नहीं, जो आदमी सप्ताह में एक दिन भी काम करता है वह भी बेकारों में शुमार नहीं किया जाता।

जर्मन मज़दूर की औसत आमदनी १०० से लेकर १५० मार्क मासिक तक कूती गई है जो भारतीय सिक्कों में लगभग ७५ रुपये के बराबर आती है। बड़ी अच्छी रक़म है ! इसमें से ५ फ़ीसदी के क़रीब तो आय-कर में चला जाता है। कुछ बीमे का कट जाता है, कुछ "शीत सहायक फ़ंड" में चला जाता है। इनके अलावा और भी दो-एक ऐसी सहायक संस्थाएँ हैं जिनके लिए आवश्यक रूप से कुछ न कुछ देना पड़ता है। एक नया टैक्स अभी हाल ही में 'मोटर' के लिए और लगाया गया है। यह मोटर ६६० मार्क में मिलेगी। इसके लिए प्रत्येक काम करनेवाले को ५ मार्क प्रति सप्ताह देने होंगे। पेट्रोल की इस महँगी के ज़माने में मोटर पाने पर भी वे लोग उसे चला सकेंगे कि नहीं, इसका उत्तर जर्मन नेता ही दे सकेंगे।

इसके अलावा प्रत्येक जर्मन नागरिक को—स्त्री हो या पुरुष—सरकारी तौर से किसी भी काम के लिए, कितनी ही मुद्दत को और कहीं के लिए, विवश किया जा सकता है। इस बीच में उसे अधिक से अधिक क्या वेतन मिलेगा, इसका निर्णय फ़ील्ड मार्शल गोरिंग के हाथ में है।

पूँजीपति और मिल-मालिक

मौजूदा जर्मनी के मिल-मालिकों और पूँजीपतियों को भी नाज़ी सरकार के कमेरे से अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता। जिस प्रकार मिलों के नौकर मालिक के वास्ते काम करते हैं, उसी तरह मिल-मालिक तथा अन्य पूँजीपति नाज़ी सरकार के लाभ के लिए अपना व्यवसाय चला रहे हैं।

इन लोगों पर आधे दर्जन सरकारी संस्थाओं के अधिकारियों का नियंत्रण है। सारे काम इन्हीं सरकारी कर्मचारियों की आज्ञा से होते हैं। कच्चा माल कहाँ से मँगाया जाय, कितना माल तैयार किया जाय, उसे किस देश के बाज़ार में भेजा जाय—इन सारी बातों का निश्चय करना सरकार के अधीन है। इन लोगों के लिए लाभ की भी हद बाँध दी गई है। ६ फ़ी सदी से अधिक लाभ इनका नहीं हो सकता। यह हिसाब लगाकर देखा गया है कि इन सरकारी कर्मचारियों की ओर से मिल-मालिकों के नाम प्रति सप्ताह ७०० से लेकर १००० तक की संख्या तक विशेषाज्ञाएँ (Ordinances) निकलती रहती हैं। इन सबका इन लोगों को पालन करना पड़ता

है। मिलों तथा फ़ैक्टरियों में मुंशी लोगों को जो काम करना पड़ता है उसका ¾ भाग इन सरकारी आज्ञाओं के सम्बन्ध में लिखा-पढ़ी करने का ही होता है।

अगर किसी मिल-मालिक या फ़ैक्टरी के स्वामी के यहाँ कोई एस॰ ए. (नाज़ीदल की प्राइवेट सेना) सैनिक नौकर है तो मालिक को उसे दल की कार्रवाइयों में भाग लेने के लिए छुट्टी देनी पड़ेगी और उस काल का पूरा वेतन भी।

अगर कोई मिल-मालिक अपनी फ़ैक्टरी का काम बढ़ाना चाहे, नहीं बढ़ा सकता और न उसके किसी भाग को बंद ही कर सकता है।

किसान

जर्मनी का किसान भी राज्य के नियंत्रण में ही कमाता है। वह अपने खेतों में अपनी मर्ज़ी से उन फ़सलों को नहीं बो सकता जिनको कि वह चाहे या जो उसके लिए अधिक लाभदायक सिद्ध हों। किस खेत में वह क्या बोयेगा, इसका निश्चय भी सरकार ही करती है। जब फ़सल तैयार होकर पैदावार उसके घर आ जाती है तो उसे अपनी पैदावार की एक निश्चित तोल निश्चित दर पर सरकार को देनी पड़ती है।

जर्मनी के अन्दर बड़े-बड़े काश्तकार और ज़मींदार तो खेती का असली काम करते हैं और शेष आदमी दूध देनेवाले जानवर पालकर अपना पालन करते हैं। जानवरों को जो चारा खिलाया

जाता है वह किसानों के खेत में पैदा होता है। चारा महँगा होने के कारण इन नीचे वर्ग के किसानों को बड़ी दिक़्क़त का सामना करना पड़ता है। पिछले ५ वर्षों में दूध आदि का भाव तो ३ फ़ी सदी ही बढ़ा है पर चारे का भाव पहले से १२ फ़ी सदी बढ़ गया है।

एक बात और भी है। काश्तकार अपनी पैदावार को सीधे गाहकों के हाथ नहीं बेच सकते। इस तरह सीधे गाहकों को अपना माल बेचने से किसानों को जो फ़ायदा हो सकता है, बेचारा उससे भी वंचित रह जाता है। उसे राज्य की ओर से खुली हुई थोक पर ख़रीदनेवाली संस्थाओं के हाथों अपना माल बेचना पड़ता है जो गाहकों को वहाँ से दिया जाता है।

कितना माल किसान बेच दे और कितना घर में बचाकर रख ले यह भी उसके बस की बात नहीं है। राज्य यह निश्चित कर देता है कि किस क़दर माल उसे राज्य के हाथों बेचना पड़ेगा। बिना राज्य की आज्ञा के वे आधसेर मक्खन तक न पैदा कर सकते हैं और न खा सकते हैं। नाज़ी सरकार का कहना है कि जिस किसान ने बिना सरकारी आज्ञा के एक अंडा भी खा लिया तो समझना चाहिए कि उसने उस अंडे की "चोरी" की।

सरकार न सिर्फ़ पैदावार और बिक्री का नियंत्रण करती है बल्कि काश्तकारों को कुछ निश्चित तोल में ख़ास क़िस्म के खाद (Fertilizers) भी ख़रीदने पड़ते हैं। हाल ही में एक और योजना निकाली गई है जिसके अनुसार प्रत्येक बड़े किसान और ज़मींदार को मोटर लारियों की एक निश्चित तादाद ख़रीदनी

पड़ेगी ताकि युद्ध के अवसर पर ये लारियाँ सरकारी काम में भी आ सकें।

कहने की आवश्यकता नहीं है कि आधुनिक जर्मनी के सब कारोबारी आदमियों में से सबसे ज़्यादा फ़ायदा उन लोगों को हुआ है जिनके शस्त्र बनाने या अन्य युद्ध में काम आनेवाली वस्तुओं के तैयार करने के कारख़ाने हैं। पूँजी रोटी पैदा करनेवाले लोगों के हाथ से निकलकर बम उत्पन्न करनेवाले लोगों के हाथ में चली गई है।

हिटलर के क़ैदी

कितने क़ैदियों ने उचित समझा। जब क़ैदियों की कोई टोली इन 'कन्सेन्ट्रेशन' कैम्पों में लाई जाती है तो पहले इन्हें दो, चार, छः और कभी-कभी लगातार दस-दस घंटे तक खड़ा रक्खा जाता है। फिर तीन दिन तक उन्हें खाना नहीं दिया जाता। इसके बाद उनसे एक विशेष प्रकार की ड्रिल कराई जाती है जिसमें कई-कई मिनट तक उन्हें अपने शरीर का सारा भार घुटनों के बल पर रखकर खड़ा रहना होता है। फिर उन्हें कुछ सामान लेकर दौड़ाया जाता है। इसके उपरान्त विभिन्न प्रकार की मार दी जाती है। इस मार के तरीक़े इतने कड़े होते हैं कि अनेक अपनी आँख दे बैठते हैं, किसी का कान बहरा हो जाता है और किसी के दाँत टूट-टूटकर गिर पड़ते हैं। बहुत-से 'क़ुदरती मौत' से मर जाते हैं। डाक्टर अंत में ही आता है और आकर "क़ुदरती मौत" का सार्टीफ़िकट दे जाता है।

केवल पुरुषों ही के साथ यह व्यवहार नहीं होता, बल्कि इनमें स्त्रियों की भी यही दुर्दशा की जाती है। पति-पत्नी को एक दूसरे की पीठ पर कोड़े की मार देखने को विवश किया जाता है।

कभी-कभी किसी नज़रबन्द को लिटाकर उसकी पीठ पर कूदा जाता है। कभी उसके हाथों के ऊपर जूते पहनकर खड़ा हुआ जाता है। कभी-कभी आधी रात के समय नज़रबन्दों को बुला लिया जाता है और कहा जाता है कि चलो तुम्हारी सुनवाई होगी। जब ये लोग पहुँचते हैं तो सुनवाई की जगह उनसे अनेक अपमान भरे हुए प्रश्न पूछे जाते हैं तथा और भी कई तरह की तरकीबों

द्वारा उन्हें तंग किया जाता है। किसी को आज्ञा दी जाती है कि तुम कुत्ते की तरह, बाउ-बाउ करके भूँको और किसी से कहा जाता है कि तुम बिल्ली बनकर 'म्याऊँ-म्याऊँ' करो।

स्टेफ़ेन लोराँ की डायरी

जर्मनी में हिटलर का युग शुरू होते ही हज़ारों स्त्री-पुरुषों को जेल-यात्रा करनी पड़ी है। इस तरह की घर-पकड़ में गिरफ़्तार होकर जेल पहुँचनेवाले लोग आज भी हज़ारों की संख्या में राजनैतिक बन्दियों का 'कन्सेन्ट्रेशन कैम्प्स' (राजनैतिक नज़रबन्दों के लिए विशेष प्रकार के बन्दीघर) में जीवन व्यतीत कर रहे हैं। न उनका अपराध गिरफ़्तारी के समय ही उनको बताया गया था और न आज तक बताया गया है। उनकी सुनवाई तक नहीं होती। कुछ बड़े भाग्यशाली ही ऐसे होते हैं जो इन कैम्प्स में जाकर जल्दी ही लौट आवें।

स्टेफ़ेन लोराँ नाम के एक अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति के पत्रकार को भी इन कन्सेन्ट्रेशन कैम्प्स में कई महीने तक जेल-जीवन की अमानुषिक यातना भोगनी पड़ी। पहले यह म्यूनिक में 'म्यूनचेरो इल्यूस्ट्रिएटे प्रेसे' नामक सचित्र साप्ताहिक पत्र के सम्पादक थे; किन्तु यहूदी होने के कारण नज़रबन्द कर लिये गये। रिहा होने पर इंग्लैंड चले आये और अब वहाँ से 'पिक्चर पोस्ट' तथा 'लिलिपुट' नाम के सचित्र पत्रों का सम्पादन कर रहे हैं।

जितने दिन ये कन्सेन्ट्रेशन कैम्प में रहे उतने दिनों की इन्होंने

गुप्तरूप से अपनी डायरी लिखी है। यह डायरी I was Hitler's Prisoner (मैं हिटलर का क़ैदी था) नाम से प्रकाशित हुई है। उनकी इस पुस्तक की आपबीती बातों से जर्मन-नीति के इस अंग पर अच्छा ख़ासा प्रकाश पड़ता है। स्टेफ़ेन महाशय की इसी डायरी से हम यहाँ कुछ अंश उद्धृत करते हैं—

(१)

म्यूनिक पुलिस जेल—१६ मार्च सन् १६३३।

जेल में आये हुए मुझे आज एक हफ़्ता हो गया। क्यों? मैं नहीं जानता। मैं यहाँ से कब रिहा हूँगा? यह भी नहीं जानता। मुझ पर क्या बीतेगी? यह भी मुझे नहीं मालूम।

शुरू में मैंने सोचा था कि मेरी सुनवाई होगी और मैं शीघ्र रिहा हो जाऊँगा। किन्तु अब? अब मैं कुछ और ही सोचता हूँ। मुझे विश्वास नहीं होता कि कभी मैं जीवित इस चहारदीवारी के बाहर भी लौटूँगा।

मुझे कभी-कभी तो ऐसा अनुभव होने लगता है जैसे कि मैं मर गया हूँ। मैं घंटों छत की ओर लेटा-लेटा देखा करता हूँ। उस समय भिन्न-भिन्न प्रकार के विचारों में तल्लीन हो जाता हूँ। थोड़ी देर में जीवित रहने की भावना फिर ज़ोर मारती है। तरह तरह के विचार मेरे मन में उठते हैं और मैं फिर तरह-तरह की तदबीरें निकालने में व्यस्त हो जाता हूँ। फिर तुरन्त ही मृत्यु का विचार मेरे ऊपर आकर सवार हो जाता है। सच तो यह है कि मेरा इस विचार से फंद छूट ही नहीं सकता। मृत्यु!

मैं इस विचार से कुश्ती लड़ता हूँ। इससे वाद-विवाद करता हूँ और अपने आपको समाप्त कर डालने की तैयारी करता हूँ।

मैं क़ैदियों का चिल्लाना सुनता हूँ—पीड़ित कैदियों की आहें मैं सुनता हूँ।

मेरे जी में विचार उत्पन्न होता है और मुझे इस बात का विश्वास हो जाता है कि मैं मरा नहीं—ज़िन्दा हूँ।

× × ×

इन पंक्तियों को मैं म्यूनिक पुलिस जेल की १४ नम्बर की कोठरी में लिख रहा हूँ। क़ैद होने के बाद से यह तीसरी कोठरी है जिसमें मैं अब लाया गया हूँ। मेरी कोठरी तीन डग लम्बी, तीन डग चौड़ी और तीन डग ऊँची है। कितनी तंग जगह है यह! किन्तु आज तो समस्त जर्मनी ही इतना संकुचित हो गया है!

मैं यह समझने की कोशिश करता हूँ कि किस तरह जर्मन लोगों को अपने देश को हिटलर और उसके साथियों को सौंप देने के लिए तैयार किया गया होगा। क्या उन्हें कभी इस बात का संदेह नहीं हुआ कि उनका 'नेता' कवि और विचारकों की इस भूमि को संकुचित विचारों का एक असभ्य देश बनाकर छोड़ेगा।

जब मैं जर्मनी के भविष्य पर नज़र डालता हूँ तो मुझे अंधकार ही अंधकार दिखाई देता है।

उसने सभी वर्गों की माँगों की पूर्ति करने का आश्वासन दिलाया। किन्तु तब किसी ने यह नहीं सोचा कि उनकी माँगें एक

दूसरे के प्रतिकूल पड़ती हैं। उन दिनों जर्मन लोग सोचना नहीं चाहते थे। वे केवल विश्वास करना चाहते थे। विश्वास करना! विश्वास करना! विश्वास करना!

मसीहा के लिए मौक़ा था—चाहे वह नक़ली ही क्यों न हो। जर्मनों को हमेशा से जादूगरों की शक्ति में विश्वास रहा है। ऐसी हालत में फिर क्या आश्चर्य होना चाहिए कि जर्मनों ने हिटलर का विश्वास कर लिया और उसे अपनी और अपने देश की रक्षा के लिए ईश्वर की ओर से भेजा हुआ साक्षात् देवदूत समझने लगे।

जनता में उसके जोश का एक नशा-सा छा गया। सब पर जैसे छू-मंतर की लकड़ी फिरा दी गई हो। श्रोताओं ने हर्षित होकर नारे लगाये। वे चीखे भी और रोये भी। सभा राजनैतिक सभा से बदलकर भक्तों की एक मंडली मात्र रह गई।

जर्मन-जाति इस समय नींद में है। वह एक स्वप्न देख रही है और उस स्वप्न का अंत भयंकर होगा। अंधकार का पर्दा हटेगा और ये लोग असलियत को पहचानेंगे। तब उन्हें पता चलेगा कि उन्हें मुग़ालते में रक्खा गया और उनके साथ धोखा हुआ।

× × ×

बाहर किसी ने कोठरी के ताले में ताली डाली। मैं अपनी नोटबुक को जल्दी से छिपा लेता हूँ। दरवाज़ा खुल गया।

"खाना!" पहरेदार चिल्लाता है। ठंडा मांस और रोटियाँ आती हैं। दाम सात पैंस।

"अपने लिए पानी लाओ।"

मैं अपना पानी का बर्तन निकालता हूँ और जाकर ताज़ा पानी ले आता हूँ।

ताला फिर बंद हुआ और दरवाज़ा लग गया। दिन बीता। ७ बजे, रात शुरू हुई। चारों ओर सुनसान है। कोई शब्द सुनाई नहीं देता। रह-रहकर एक क़ैदी के कराहने के शब्द ज़रूर सुनाई पड़ते हैं। वह बार-बार यही दोहराता है—"हे भगवान् ! मैंने क्या किया है जो तुम मुझे यहाँ लाये हो। हे ईश्वर........।" एक घंटे के क़रीब तक मुझे उसका कराहना सुन पड़ता है। फिर वह बंद हो जाता है। ग़रीब को नींद आ गई।

× × ×

नाज़ीक्रांति के तीन दिन बाद मैं म्यूनिक वापस आया। दफ़्तर आने पर मालूम हुआ कि मेरे साथी स्कूपिक, जो 'सुददोयचे सोनतागपोस्ट' के सम्पादक थे, क़ैद हो गये और अभी तक छोड़े नहीं गये हैं। उनकी क़ैद का कारण नहीं मालूम ; किन्तु अफ़वाह थी कि कुछ दिनों से वे हिटलर के विरुद्ध लेख छापने लग गये थे। हम लोग समझ गये कि यह अफ़वाह एक बहानामात्र है। वास्तव में यह हम लोगों की क़ैद की शुरुआत है। यह सोचना एकदम सच निकला। अभी मैं दफ़्तर में बैठा भी नहीं था कि ख़बर मिली कि 'म्यूनचनेर नोएस्टेन नखरिस्टेन' के सम्पादक बुकनर और वेरन आरटिन भी क़ैद कर लिये गये। केवल मैं और 'टेलीग्राम साइटुंग' के सम्पादक राबे बचे हुए थे।

इसके बाद कोई विशेष बात नहीं हुई । दूसरे दिन १४ मार्च को सुबह होते ही किसी ने मेरा दरवाज़ा खटखटाया ।

"क्या है ? कौन इस समय दरवाज़ा खटखटा रहा है ?"—मैंने पूछा ।

रसोइये ने नींद से आँख मलते हुए कहा—"दो पुलिस के आदमी आये हैं । क्या दरवाज़ा खोल दूँ ?"

"हाँ, दरवाज़ा खोल दो ।"

धीरे-धीरे मेरी खुमारी टूटी । मैं चौंक पड़ा । पुलिस ! पुलिस के दोनों आदमियों में एक ने, जो सीनियर था, अपना अधिकार-पत्र दिखाया और बोला, "हम लोग आपके घर की तलाशी लेना चाहते हैं, आप अपने काग़ज़-पत्र कहाँ रखते हैं ?"

मैंने टेबिल की दराज़ें खोल दीं ।

पूरे घंटे भर बाद काग़ज़ों की जाँच हो जाने पर मुझसे दफ़्तर चलकर वहाँ के काग़ज़ों की भी जाँच कराने के लिए कहा गया । हम लोग दफ़्तर आ गये । दोनों पुलिसवाले मेरे डेस्क के काग़ज़ों की एक-एक करके छानबीन करने लगे ।

"क्या खोज रहे हो ?"—मैंने पूछा । वे कुछ सकपका-से गये । प्रत्यक्ष था कि उन्हें खुद नहीं मालूम था कि वे क्या चाहते हैं ।

"इन्सपेक्टर को फोन किया जाय ।"—एक ने राय दी । दूसरे ने फोन पर कहा, हम लोगों की जाँच ख़तम हो गई । कुछ भी नहीं मिला । क्या कोई ख़ास चीज़ ढूँढ़नी है ?....बहुत अच्छा, मैं समझ गया, व्यंग चित्र....

मैं मुस्करा उठा—"मेरे पास कोई व्यंग चित्र नहीं है। तुम लोग जानते ही हो, यह सचित्र साप्ताहिक है, इसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं।"

किन्तु इन्सपेक्टर को संतुष्ट करने के लिए कुछ तो ले ही जाना होगा।

मुझे मज़ाक़ सूझा। मैंने कहा फ़ोटो की यह रद्दी टोकरी ले जाओ; पर उन्हें यही बात पसन्द आई। रद्दी की टोकरी उठाकर मुझे भी अपने साथ थाने पर चलने को उन्होंने कहा।

वहाँ पहुँचने पर पहले इस बात की जाँच कर ली गई कि मेरे पास कोई हथियार तो नहीं है। इसके बाद मेरा हैट, मेरी छड़ी, मेरी नोटबुक, मेरी पेन्सिल, सभी कुछ मुझसे ले लिया गया और एक पहरेदार को एक चिट देकर मुझे उसके साथ कर दिया गया।

"क्या मैं क़ैद में हूँ?"—मैंने पूछा।

"नहीं। अभी आपको नज़रबन्द रखा जाता है।"—उत्तर मिला।

"किस कारण से?"

कोई भी उत्तर नहीं मिला।

हम लोग चौतल्ले पर पहुँचे। एक कोठरी के सामने रुककर पहरेदार ने कहा—"यह ४७ नम्बर की कोठरी तुम्हारी है।" उस समय कोठरी को धोया जा रहा था। उसमें तीन क़ैदी और थे, मैं भी उन्हीं के साथ खड़ा कर दिया गया। सब बाहर बरामदे में खड़े थे। कोठरी धुल जाने के बाद हम लोगों

को उसमें बन्द कर दिया गया। मैं क़ैदी हो गया। लड़कपन में कोई शरारत करने पर मैं घर में बन्द कर दिया जाता था; किन्तु बड़े होने पर भी ताले में बन्द होना बड़ा विचित्र-सा लगा। मैं हँस पड़ा।

हम लोगों ने एक-दूसरे का परिचय प्राप्त किया। उक्त तीनों सज्जनों के नाम थे कार्ल बाख़, लिंक और स्ट्राखवित्स।

"क्यों क़ैद किये गये हो?"—उन सबों ने पूछा।

"मैं नहीं जानता।"—मैंने कहा।

"तुम लोग क्यों यहाँ लाये गये?"—मैंने भी उनसे पूछा।

"हम लोगों को भी मालूम नहीं कि क्यों हम लोग क़ैद किये गये हैं।"—कार्ल बाख़ और काउन्ट स्ट्राखवित्स ने एक ही साँस में जवाब दिया।

थोड़ी देर बाद काउन्ट स्ट्राखवित्स ने कहना शुरू किया—"आख़िरी रात मैं अपने चचेरे भाई बैरन आरटिन के घर में सोया था। सुबह जब पुलिस बैरन आरटिन को क़ैद करने आई; तो साथ में मुझे भी लेती चली आई।"

"बैरन आरटिन तो मेरे साथी हैं। उनका क्या हुआ?"—मैंने पूछा।

"इस कोठरी के ठीक सामने ३९ नम्बर की कोठरी में सम्पादक बुकनर के साथ बन्द हैं।"

दूसरे दिन शाम को 'फोकिशेर बेओबाखतर' पढ़ते हुए अकस्मात् स्ट्राखवित्स चिल्ला उठा, "यह पढ़ो!"

मैंने देखा अगले ही पेज पर मोटे अक्षरों में छपा था—

म्यूनिक में और धर-पकड़

'म्यूनचेनेर इल्युस्ट्रिएटे प्रेसे' के सम्पादक लोरां को आज सुबह बोल्शेविक षड्यन्त्र के सन्देह में पकड़ा गया। नैशनल सोशलिस्ट जर्मनी में यह सबसे बड़ा अपराध समझा जाता है।

× × ×

मैंने जेल से छूटने की आशा छोड़ दी। बेचैनी से मैं चहलक़दमी कर रहा था, तभी मेरी पुकार हुई। मैं एक अफ़सर के सामने हाज़िर किया गया। उसने मुझे बैठने के लिए एक कुर्सी देते हुए कहा, "मुझे आपके पास पाई गई दो-एक चिट्ठियों के बारे में कुछ सवाल पूछने हैं। यह चिट्ठी आपको १९२९ में लिखी गई थी। इसे लिखनेवाला कौन है?"

उसने पत्र की कुछ पंक्तियों को टाइप कराके मुझे दे दिया। उन पंक्तियों से इतना ही विदित होता था कि किसी ने रूस-भ्रमण करते हुए वहाँ के कुछ चित्रों को 'म्यूनचेनेर इल्युस्ट्रिएटे प्रेसे' में छाप देने के लिए लिखा है। मैंने कहा, "यह पत्र आफ़िस के पते से आया, और मेरे यहाँ रोज़ ही सैकड़ों पत्र आते हैं। ऐसी हालत में इस पत्र के लिखनेवाले को याद रखना मेरे लिए असम्भव है। पत्र पर उसका नाम और पता लिखा होगा, आप खुद ही उसका पता लगा सकते हैं।"

"तो आप इसके लिखनेवाले को नहीं जानते हैं?"—उसने पूछा।

"नहीं, मैं नहीं जानता।"

उसने टाइपिस्ट को मेरा उत्तर टाइप करने का आदेश किया। इसके बाद मेरी तरफ़ एक पोस्टकार्ड बढ़ाते हुए उसने कहा, "यह कैसा पोस्टकार्ड है ?"

सन् १९३१ में प्रसिद्ध अभिनेत्री मारारेट मेलसर का भेजा हुआ सचित्र पोस्टकार्ड था।

मैंने जवाब दिया, "एक साधारण सचित्र पोस्टकार्ड है, जिसे मेरे एक परिचित ने भेजा है।"

"किन्तु यह रूस से आया है।"

"तो फिर ? रूस-भ्रमण करनेवालों से परिचय रखना तो जुर्म नहीं है। हज़ारों जर्मन रूस-भ्रमण के लिए निकलते हैं।"

"एक जगह यह महिला लिखती हैं कि यहाँ के निवासियों को समझने के लिए मैं मार्क्स और एंजेल्स पढ़ रही हूँ। इसके क्या माने हुए ?"

"अब तक कोई जर्मन किसी किताब को पढ़ सकता था। मेरे किसी जानते हुए ने अपनी इच्छा से कोई किताब पढ़ी, इसका ज़िम्मेदार मुझे ठहराना तो सरासर अन्याय है।"

कुछ देर तक चुप रहकर उसने फिर टाइपिस्ट से कहा, "टाइप कर दो कि इस पत्र में जो कुछ लिखा है उसका मैं कुछ अर्थ नहीं निकाल सकता।"

मैं इस कथन का विरोध करते हुए बोला—"मैं यह नहीं कहता। मेरा कहना तो सिर्फ़ यह है कि भ्रमण करनेवाले का अपने परिचित को कुशल-मंगल का यह एक साधारण पत्र है।"

यूरोप का रावण हर हिटलर



हिटलर

मेरे सभी उत्तर टाइप करके मेरे सामने लाये गये। मैंने उन पर अपने दस्तख़त कर दिये। मुझे फिर अपनी कोठरी के पास लाया गया। जिस पहरेदार के पास उस कोठरी की ताली थी वह वहाँ नहीं था। मेरे साथवाला सिपाही उसे तलाश करने चला गया। मैं अकेला रह गया। तुरन्त २९ नम्बर की कोठरी के सामने पहुँचा। दरवाज़े के पतले फाँक से मैंने झाँका। अन्दर दोनों कुछ पढ़ रहे थे। मैंने हौले से अपना नाम बताया। दोनों चौंक पड़े।

"तुम यहाँ कैसे ?"—बुकनर ने पूछा।

"फोकिशेर 'बेओबाख़्तर' के अनुसार बोलशेविक षड्यन्त्र के लिए क़ैद हुआ हूँ।"

"कैसा अनर्थ है। तुम तो कभी राजनैतिक पचड़े में पड़े ही नहीं।"

पहरेदार उसी क्षण वहाँ आ पहुँचा और उसने मुझे वहाँ खड़ा हुआ देख लिया। इसके फलस्वरूप अगले ही दिन मुझे ४७ नम्बर की कोठरी से निकालकर ४० नम्बर की कोठरी में बन्द कर दिया गया।

इसमें लकड़ी का एक तख़्ता और पुआल भरा एक बोरा रक्खा था। यहाँ मेरा कोई साथी न था। यह कोठरी इतनी नम और ठंढी थी कि मैं एक ही रात में अकड़ गया। सुबह को देखा तो मुझे बुख़ार था। कुछ दिन चढ़े मुझे फिर एक अफ़सर के आगे लाया गया। और मेरी उँगलियों के छाप लिये गये। मेरा फ़ोटो भी लिया गया और फिर मेरे मुँह की परीक्षा भी हुई। एक

अफ़सर ने मेरे सोने के दाँत गिने और उनकी संख्या लिख ली गई। थकावट से मेरा शरीर गिरा पड़ता था, पैर काँप रहे थे। मैं ज़मीन पर बैठ गया।

"क्या बात है ?"—अफ़सर ने पूछा।

"इस ठंढी कोठरी में एक दिन भी ज़िन्दा न रह सकूँगा। सर्दी के कारण मेरी सारी देह अकड़ गई है, बुख़ार के कारण खड़ा भी नहीं हुआ जाता।"—मैंने उत्तर दिया।

इसके बाद मैं दोतल्ले में १४ नम्बर की कोठरी में लाया गया। तभी से इसमें हूँ, और इसी में बैठकर यह सब पंक्तियाँ लिख रहा हूँ।

सुबह हो गई। मैं अभी तक लिख ही रहा हूँ। रात भर लिखता रहा हूँ। मालूम नहीं पहरेदार कल रात बत्ती बुझाना क्यों भूल गया था।

२२ मार्च

कल रात ११ बजे के क़रीब किसी के ज़ोर-ज़ोर से चीख़ने के कारण मेरी नींद खुल गई। मैंने अपनी कोठरी के दरवाज़े के निकट जाकर कान लगाकर सुना। कोई कह रहा था:—

"मेहरबानी करके मुझे न मारो........ मैं चल रहा हूँ........मैं चल रहा हूँ, मेहरबानी करके मुझे मारो मत........"

यह किसी ग़रीब की प्रार्थना थी जिसे बुरी तरह बरामदे में खचेड़ा और मारा जा रहा था। दूसरी निर्दय ध्वनि सुनाई दे रही थी:—

"कुत्ता कहीं का, कुत्ता........अपने जबड़े खोल........"

'पट्ट'—घूँसे की आवाज़ या लात होगी। पीछे से चली वही शब्दावली।

पिटनेवाले को चोट लगी, ज़ोर से चिल्ला पड़ा।

"मुझे न मारो........मुझ पर रहम करो........मैं चल रहा हूँ। मुझे न........"

इस ग़रीब की रोने की हिलकियाँ हृदय को पिघलानेवाली थीं। मैंने आकर अपना सिर तकिये से ढक लिया। यह सुनना मुझसे बर्दाश्त न हो सकता था।

२७ मार्च

रात-दिन नये क़ैदियों के आने का ताँता लगा रहता है। जब हम वर्ज़िश करने जाते हैं उन्हें देखते हैं।

एक किसान जिसके घर में दो बेकार राइफ़ल मिले। एक मज़दूर जिसने यह कह दिया था—"हिटलर हमारा उद्धार नहीं कर सकता।" एक चित्रकार जो कम्यूनिस्ट-पार्टी का सदस्य था। एक किसान जिसके बारे में बताया जाता था कि उसने कुछ हथियार छिपा लिये थे।

ये सब राजनैतिक क़ैदी हैं।

उनके यहाँ होने का कारण?

"हमारे ख़िलाफ़ रिपोर्ट की गई है, बस"—यही उनका उत्तर है। जर्मनी में जब कोई अपने प्रतिद्वन्द्वी दूकानदार को अलग करना चाहता है, या अपने दुश्मन को बेचैन करना चाहता है या किसी

प्रेमी से बदला लेना चाहता है तो वह झट उसके विरुद्ध राजनैतिक पुलिस में अपना बग़ैर दस्तख़तों का ख़त भेज देता है।

फिर जो होना होता है वह आप हो रहता है। जिसके ख़िलाफ़ शिकायत की जाती है वह गिरफ़्तार हो जाता है। उसका अपराध है कि नहीं, यह पूछनेवाला कोई नहीं।

३० मार्च

जेल का पहरेदार कहता है—

"ईस्टर से पहले ५००० राजनैतिक क़ैदियों की रिहाई होगी।"

२६ अप्रेल

३६ नम्बर की कोठरी में जो एक नया क़ैदी आया है वह किसी से कुछ नहीं बोलता। वह दुखी, निराश और परेशान है।

मैंने उसे अपना परिचय दिया और उसका नाम पूछा।

वह बोला—"मेरा नाम वेगसेक है।"

"तब तुम्हीं वह आदमी हो, जिसने हिटलर की हत्या करनी चाही थी।"

वेगसेक मेरी ओर ताकने लगा। वह बोला—"मैं तुम्हारी बात बिल्कुल नहीं समझा।"

"सब समझ जाओगे। 'टेलीग्राम जीटुंग' पत्र को उठाकर पढ़ो।"

मैंने उसकी कापी लाकर वेगसेक को दिखाई। पहले ही सफ़े पर था:—

"हिटलर की हत्या करने का षड्यन्त्र

म्यूनिक, २५ अप्रेल

चांसलर अडोल्फ़ हिटलर की हत्या के लिए किये जानेवाले एक षड्यन्त्र का पता चला है। टाइरोलीज़ सीमान्त-प्रदेश से समाचार मिला था कि एक मोटरगाड़ी, जिस पर इटली का नम्बर और इटालियन झंडा था, रोककर ज़ब्त कर ली गई। उसमें टैगोर नाम का एक हिन्दुस्तानी था, जो रूस की कम्यूनिस्ट-पार्टी का एक सदस्य है। उसके साथ वेगसेक नाम का एक दूसरा व्यक्ति था। मोटर में संदेह उत्पन्न करनेवाला बहुत-सा सामान था। इन लोगों का इरादा चांसलर को क़त्ल करने का था। हिन्दुस्तानी की उम्र लगभग ४० वर्ष की है और वह बड़ा हृष्ट-पुष्ट है। म्यूनिक की पुलिस ने इन दोनों को इतवार के दिन पकड़ा है और उन्हें म्यूनिक पहुँचा दिया गया है।"

वेगसेक ने इस समाचार को बार-बार पढ़ा। उसकी समझ में कुछ न आया।

वह बोला—"मैं अपनी मोटर में मेरन से जर्मनी को अपनी दो पुत्रियों को स्कूल में पहुँचाने की ग़रज़ से ले जा रहा था। मेरे साथ मेरी पत्नी और बच्चों के अलावा मेरे एक परिचित हिन्दुस्तानी, टैगोर, भी थे। वे भारतीय कवि श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर के भतीजे हैं। जब हम जर्मन-सीमा पर पहुँचे, हमें गिरफ़्तार कर लिया गया।"

वेगसेक ने यह कहकर गहरी साँस ली। "मेरी पत्नी और बच्चे रेल से आ रहे थे। मुझे और टैगोर को पुलिस की चौकी पर एस० ए० सैनिकों की निगरानी में लाया गया।"

मैंने पूछा—"लेकिन पत्रों में यह समाचार क्यों निकला कि तुम हिटलर की हत्या का षड्यन्त्र कर रहे थे।"

"मुझे बिल्कुल ख़बर नहीं। अपने जीवन में राजनीति से कोई वास्ता नहीं रहा। मैं मेरन में रहता हूँ और जर्मनी में बहुत दिनों से नहीं आया। रहा टैगोर के सम्बन्ध में, वह तो एक यात्री की तरह जर्मनी देखने के लिए आये थे।........ख़ैर, उनके मन की बात पूरी हुई।"

यह कहकर वेगसेक मुस्करा गया।

मैंने प्रश्न किया—"अब टैगोर कहाँ है?"

"नीचे तीसरी मंज़िल पर"—उत्तर मिला।

"और तुम्हारी स्त्री और बच्चे?"

"मुझे नहीं मालूम।"

वेगसेक चुप हो गया। उसका चेहरा उदास हो गया और निराशा से वह हाथ मलने लगा। उसके नेत्रों में आँसू झलक आये।

२७ अप्रेल

"हिटलर के हत्यारों" की सुनवाई परसों से लगातार हो रही है। इतनी जल्दी! निःसन्देह भारतीय सरकार ने टैगोर के विषय में दख़लन्दाज़ी की है और इटालियन सरकार ने वेगसेक के बारे

में। यदि ऐसा न किया गया होता तो अवश्य ही इनके मामले में इतनी जल्दी से काम न किया जाता।

× × ×

म्यूनिक के अखबारों में आज यह खबर निकली है:—

"कुछ अखबारों में एक हिन्दुस्तानी और उसके साथी के विषय में यह समाचार प्रकाशित हुआ है कि यह लोग हिटलर की हत्या करने की साज़िश कर रहे थे। अब तहक़ीक़ात से यह बात निराधार सिद्ध हुई है। ये लोग अपने निजी काम से यात्रा कर रहे थे।"

६ मई

अच्छा हट्टा-कट्टा एक आदमी—काफ़ी पुट्ठेदार। बड़ी-बड़ी भूरे रंग की आँखें। स्पष्ट भावभंगी और मोहनी चितवन। सुंदर पुरुष। ३० वर्ष की आयु।

वह पेसे से बढ़ई है और ४० नम्बर की कोठरी में बन्द है।

"क्या तुम किसी पार्टी के मेम्बर थे?"

"हर्गिज़ नहीं। ऐसी बातों से मुझे क्या मतलब?"

"तब तुम यहाँ कैसे आये?"

"मैं नहीं जानता। सुनवाई के समय मुझसे पूछा गया था कि मैंने हथियार कहाँ छिपा दिये हैं। मैंने कहा कि मेरा ऐसी चीज़ों से कभी कुछ काम नहीं पड़ता और मुझे इस बारे में कुछ भी मालूम नहीं है।"

"लेकिन कोई बात तो ऐसी ज़रूर होगी ही जिसकी वजह से तुम यहाँ पर लाये गये हो।"

"हाँ"—उसने क्रोध से आँखें लाल करते हुए कहा। "मैं यहाँ इस वजह से लाया गया हूँ कि मैंने एक औरत के प्रेम को स्वीकार करने से इनकार कर दिया था। एक दुश्चरित्र औरत मेरे पीछे बहुत दिनों से लगी फिरती थी। मैंने उसकी कुछ पर्वा न की, क्योंकि मैं एक दूसरी लड़की से प्रेम करता था। इसलिए मैंने उसे दुत्कार दिया। उसने पुलिस में रिपोर्ट करने की धमकी दी थी। उसने यही किया।"

१७ मई

आज की हौलनाक ख़बर। रात हमारे साथी डाक्टर गेलरिक को एस॰ ए॰ के सैनिकों ने इतना पीटा कि बेचारे की जान निकलने से रह गई।

डाक्टर फ़्रिज गेलरिक, जो एक कैथोलिक पत्र के प्रकाशक हैं, नाज़ियों की आलोचना करने के कारण ९ मार्च से तीसरी मंज़िल की एक अँधेरी कोठरी में कारावास काट रहे हैं। वे हम लोगों में बड़े प्रिय बने हुए हैं।

कल रात १ बजे डाक्टर गेलरिक को एस॰ ए॰ के सैनिक उनकी कोठरी से लिवा ले गये। उन्हें अनेक लैम्पों की चकाचौंध पैदा करनेवाली रोशनी में खड़ा कर दिया गया और अफ़सर लोग अँधेरे में थे। उनसे पूछा गया—

"तुम्हें ब्राउनहाउस के बारे में समाचार कहाँ से मिलते थे?"

"मेरे पत्र में जो लेख प्रकाशित हुए हैं उनका ज़िम्मेदार मेरे अलावा और कोई व्यक्ति नहीं है।"

"तो तुम अपने साथियों का नाम न बताओगे।"

"नहीं" —डाक्टर गेलरिक ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया।

इस पर उन लोगों ने डाक्टर गेलरिक को ढकेलकर मेज़ से मारा। रबड़ के २५ कोड़े उनकी पीठ पर पड़े।

डाक्टर गेलरिक ने चूँ तक नहीं की।

उनसे फिर सवाल पूछे गये। वे चुप रहे। बार-बार उनसे पूछा जाता था—

"तुम्हें ख़बरें डाक्टर बैल से मिलती थीं?"

डाक्टर गेलरिक ने कोई उत्तर न दिया।

"तुम्हें बोलना पड़ेगा—कुत्ता कहीं का।"

२५ कोड़े और लगे।

ग़रीब को मार के कारण मूर्छा आ गई।

"अब क़बूल करो।"

डाक्टर गेलरिक ने कोई जवाब नहीं दिया।

मेज़ पर एक रिवाल्वर फेंककर एक अफ़सर ने बड़े कठोर स्वर में कहा—

"यह लो, अपने आपको गोली मारो।"

डाक्टर गेलरिक को अब बोलना पड़ा—"मैं कैथोलिक हूँ। अपने हाथ से अपनी हत्या नहीं करूँगा।"

वे घुटने टेककर ज़मीन पर बैठ गये और प्रभु का भजन करने लगे। अपनी मृत्यु से भेंट करने के लिए यह उनकी तैयारी थी। अपने भगवान् के साथ वे उस समय अकेले ही थे।

भजन करते हुए वे यह आशा कर रहे थे कि गोली शीघ्र ही उनके जीवन का अंत कर देगी।

इस दृश्य का उन लोगों पर भी प्रभाव पड़ा। वे आपस में सलाह करने लगे। डाक्टर गेलरिक को गोली मारने की उनकी हिम्मत न हुई।

डाक्टर गेलरिक को फिर उनकी कोठरी में पहुँचा देने की आज्ञा हुई। जाते हुए पहरेदारों ने उन्हें सीढ़ियों से नीचे को ढकेल दिया। बाद में एक आदमी ने उनके हाथों को एड़ीदार जूतों के नीचे दबा लिया।

जब डाक्टर गेलरिक अपनी कोठरी में पहुँचे तो उनका शरीर खून से लथपथ था। उन्होंने वहाँ जाकर कुछ देर भगवान् का नाम लिया; क्योंकि वे अभी ज़िन्दा थे।

२७ मई

डाक्टर स्ट्रोस की मृत्यु

डाक्टर स्ट्रोस एक अँधेरी कोठरी में बन्द थे। उनकी टाँगों को मार-मारकर तोड़ दिया गया। वे अधमरे कर दिये गये। उनका खाना बंद कर दिया गया। स्ट्रोस शरीर के मज़बूत थे। वह इतने पर भी न मरे।

दो सप्ताह तक डाक्टर स्ट्रोस की मृत्यु के साथ कुश्ती चलती रही। इसके बाद उनको गोली मार दी गई। दो गोली उनके सिर में बैठीं और उनका अंत हो गया।

× × ×

डाक्टर स्ट्रोस की माँ जीवित थी। उसे वह बहुत मानते थे। माँ-बेटा दोनों का जीवन बड़ा सुखमय था। अभागी बूढ़ी माँ को बेटे की मौत का समाचार इस प्रकार मिला—

एस॰ ए॰ का एक सैनिक एक दिन उसके घर आया और पूछा कि क्या उसके बेटे को दिल की बीमारी थी ?

बुढ़िया ने सोचा कि यदि वह 'हाँ' कह देगी तो उसके बेटे को बीमार समझकर छोड़ दिया जायगा। वह बोली—

"हाँ, मेरे बेटे का दिल कमज़ोर था।"

"ठीक, कल उसे दिल का दौरा हुआ और वह मर गया।"

× × ×

ओफ़ ! मिस्टर लोराँ की डायरी के पन्नों की गाथा द्रौपदी के चीर की तरह लम्बी होती जा रही है। अब........................।

× × ×

नाज़ियों के निर्वासित व्यक्ति

जर्मनी के अनेक विद्वान् व्यक्तियों को हिटलर की सरकार ने देशनिकाला दे दिया है। उनकी संख्या भी कम नहीं है। इनमें से अनेक व्यक्तियों को 'जर्मनी का रत्न' कहा जा सकता है।

इस प्रकार निर्वासित किये जानेवाले व्यक्तियों की संख्या थोड़ी नहीं है। ३ दिसम्बर सन् १६३६ के साप्ताहिक 'देशदूत' में कुमारी सुशीला सेठी ने इन व्यक्तियों के सम्बन्ध में एक लेख लिखा था। उसका कुछ अंश इस प्रकार था;—

अर्लत्रान ओसेज्की प्रसिद्ध जर्मन लेखक तथा शान्ति के लिए नोबेल पुरस्कारविजेता थे। उनकी मृत्यु गत वर्ष हुई। डाक्टर टामस मैन पक्के 'आर्य' तथा 'जादू का पहाड़'-नामक पुस्तक के प्रसिद्ध लेखक थे। जब हिटलर शक्ति में आया उस समय वे स्कैन्डनेविया में थे। बेचारे स्वदेश फिर वापस न आ सके।

आर्नल्ड ज्वेग 'सर्जेन्ट ग्रिशा' के प्रसिद्ध लेखक भी निर्वासित हैं। इनका विश्वास है कि जर्मनी की जो कुछ भी सामाजिक या दिमाग़ी उन्नति हुई है उसका मुख्य श्रेय यहूदियों को है। आस्ट्रिया को हड़पते ही हिटलर ने आस्ट्रिया की प्रसिद्ध अभिनेत्री लुईस रेनर को निर्वासित कर दिया। उसका एकमात्र अपराध यही था कि वह यहूदी थी। यही दुर्भाग्य दूसरी प्रसिद्ध यहूदी अभिनेत्री लूसी मैनहेम का हुआ। इसकी कला की प्रशंसा ब्रिटेन तक में थी।

बर्लिन के प्रसिद्ध पत्रकार विकीबोम निर्वासन के दूसरे शिकार हैं। संसार के सबसे प्रसिद्ध निर्वासित हैं प्रोफ़ेसर अल्बर्ट इन्सटेन। नाज़ी इन्हें पाने के लिए जी-जान से कोशिश कर रहे थे, अन्त में बेलजियम की सरकार ने उन्हें और कहीं चले जाने की सम्मति दी। वे अब इंग्लैंड में हैं। एमिल लुडविग निर्वासन के पश्चात् इधर-उधर घूमते रहे। उन्होंने अपनी दो पुस्तकों 'नेपोलियन' और 'नाइल' से संसार के विद्वानों पर अपनी धाक जमा ली है।

अलेक्ज़ेन्डर कोरडा जर्मनी छोड़कर आस्ट्रिया में आ बसे थे, पर उन्हें वह भी छोड़ना पड़ा। पाल ज़िनर और कान्टेड वेड्ट ब्रिटिश नागरिकता के लिए प्रयत्न कर रहे हैं।

जर्मनी के भूतपूर्व चांसलर वर्थ पेरिस में रहकर कभी-कभी लेखनकार्य करते हैं। पेरिस में ही एक और श्रेष्ठ व्यक्ति 'पुटज़्री' हेल्फसाटगल भी हैं। डाक्टर हनरिच बुएनिंग राइख के भूतपूर्व चांसलर कठिनता से हिटलर के हाथों से बच सके। वियना के प्रसिद्ध लेखक की स्त्री फ्लावरफेल निर्वासित हैं। यहूदी अभिनेत्री गनर तो अपनी मातृभूमि में नाज़ी-अत्याचार देखने के लिए न होने से खुश है। वह जिस देश में जाती है वहीं उसे और कहीं नहीं जाने देना चाहता। राजकुमार हरवर्टस लोवेन्स्टेन बेचारे अमरीका में दिन काट रहे हैं। ल्यून फ़्यूट्स वेन्जर, स्टेफन ज्वेग हेनरिच मैन अन्स्र्ट टालर, वर्न्स फ्रैंक आदि कितने ही विद्वान् तथा श्रेष्ठ व्यक्ति जर्मनी से निर्वासित होकर विदेशों में दिन काट रहे हैं।

हाऊ-हड़प—१

हाऊ-हड़प—१

विगड़ती है जिस वक़्त ज़ालिम की नीयत।
नहीं काम देती दलील और हुज्जत ॥

× × ×

"या तो जर्मनी को सार्वभौमिक शक्ति बनकर रहना चाहिए या मिट जाना चाहिए।"

—हर हिटलर

"यदि सब जर्मन लोग मिलकर एक हो जायँ तो आज ही जर्मन राइख समूचे ग्लोब का स्वामी हो जाय।"

—हर हिटलर

नाज़ी जर्मनों का कहना है कि "वे एक हाथ में 'माइन काम्फ़' और दूसरे में तलवार लेकर आगे बढ़ रहे हैं।"

इस 'माइन काम्फ़' के पहले ही सफ़े पर हिटलर ने यह लिखकर अपनी नीयत का परिचय दिया है:—

"भाग्य ने यह मेरे लिए अच्छा ही किया कि आस्ट्रिया तथा

जर्मनी के सीमाप्रान्त को मेरा जन्म-स्थान नियत किया। इन दोनों राष्ट्रों को एक में मिला देने की कितनी बड़ी ज़रूरत है यह बात इस युग का तरुण सम्प्रदाय उतनी ही अच्छी तरह से महसूस करने लगा है जिस रूप में मैं बराबर करता आया हूँ।........ आस्ट्रिया के उस भाग को जिसमें जर्मन-जाति का प्राधान्य है विशाल जर्मन-मातृभूमि के अन्तर्गत होना ही पड़ेगा—आर्थिक दृष्टिकोण से नहीं। यदि आर्थिक दृष्टिकोण से दोनों राष्ट्रों का मिलान हानिकारक भी हो तो भी हमें इस महत् उद्योग से जी न चुराना होगा।"

आगे चलकर उसी अध्याय में दूसरे स्थान पर लिखा है:—

"छुटपन से ही मुझे इस बात पर पूरा विश्वास हो गया कि आस्ट्रियन राष्ट्र का सम्पूर्ण विनाश जर्मन-जाति के पुनरुद्धार के लिए अत्यन्त आवश्यक है।"

हिटलर के अब तक के जीवन को हम दो भागों में बाँट सकते हैं। इनमें से पहले चार वर्षों में सन् १९३३ से लेकर १९३७ तक उसने वर्साई की संधि को तोड़ा और इटली के तानाशाह मुसोलिनी के साथ मेल बढ़ाकर अपने आपको यूरोप के अन्य देशों की स्वतंत्रता छीनने को तैयार कर लिया। १९३७ से लेकर आगे का अब तक का ज़माना नाज़िज़्म के नग्न नृत्य का ज़माना है। इन्हीं थोड़े-से दिनों में उसने कई स्वतन्त्र राष्ट्रों का गला घर दबोचा और उनकी आज़ादी का अन्त करके उन्हें 'राइख' का गुलाम—तृतीय साम्राज्य का अंग—बना लिया।

यूरप १९१९



नाज़ीवाद की साम्राज्य-लिप्सा

१ मार्च १९३८—आस्ट्रिया जर्मनी में मिलाया गया।

१५ मार्च, १९३९—चेकोस्लोवाकिया का अंत।

२२ मार्च, १९३९—मेमल पर अधिकार।

१ सितम्बर १९३९—डैन्ज़िग जर्मन साम्राज्य का अंगघोषित किया गया।

१ सितम्बर १९३९—पोलैण्ड पर आक्रमण और बाद में रूस के साथ उनकी आध-बटाई।

युद्ध शुरू होने से अब तक (अगस्त, १९४०) पोलैण्ड के अतिरिक्त जिन देशों पर जर्मनी का अधिकार हो चुका है वे ये हैं—

नार्वे, डेनमार्क, हालैण्ड, बेल्जियम लक्समबर्ग, और फ्रांस,

जर्मनी की इस भूख का सबसे पहला शिकार—आस्ट्रिया। आस्ट्रिया इटली और जर्मनी दोनों के बीच में स्थित था। वहाँ प्रजातंत्र-प्रणाली का शासन था पर देश में फूट थी। कहना न होगा कि इस फूट में नाज़ियों का और उनके 'नेता' का हाथ था। इटली भी वहाँ अपना प्रभाव बढ़ाने की फ़िक्र में था।

जर्मनी के पक्ष में नाज़ी लोग आस्ट्रिया में गजब का प्रचार कर रहे थे। जनवरी १९३३ से लेकर जुलाई ३४ तक के १७ महीनों में हिटलर की सरकार ने ७५,०००,००० मार्क का सोना आस्ट्रिया में जर्मन-प्रचार के लिए ख़र्च किया था। २५ जुलाई का दिन षड्यन्त्र के लिए नियत किया गया। पहले नाज़ियों ने वियना के रेडियो-स्टेशन पर ज़बरदस्ती क़ाबू कर लिया। रेडियो द्वारा षड्यन्त्र रचने में कितनी सहायता मिल सकती है, यह नाज़ियों से सीखा जाय।

उन दिनों आस्ट्रिया का चांसलर था—डालफ़स। एक गट्टे क़द का साहसी आदमी। वह अपने मंत्रिमंडल की बैठक बरख़ास्त करके उठा ही था और अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में जानेहीवाला था कि उसके एक कर्मचारी ने आकर ख़बर दी कि षड्यन्त्रकारी लारियों से उतर रहे हैं। ये लोग जिन मोटरों से आये थे उनके ऊपर लिखा हुआ था—'अंडा और मक्खन'—ताकि नगरनिवासियों को पता न चल जाय। १२ बजकर ५५ मिनट पर ये लोग मकान में दाख़िल हुए और एक बजकर २ मिनट जाते-जाते उनके हाथों आस्ट्रियन चांसलर का काम तमाम हो चुका था।

डाल्फ़स के लिए भागने का मौक़ा न था। षड्यन्त्रकारियों में से प्लेनेटा नाम के एक व्यक्ति ने गोली चलाई। वह डाल्फ़स की बग़ल में आकर लगी। दूसरी गोली ठीक गले में आकर बैठी, डाल्फ़स गिर गया।

"मदद, मदद" डाल्फ़स ने लड़खड़ाते हुए स्वर में कहा। प्लेनेटा निकट आकर बोला—"खड़े हो जाओ।"

"मैं नहीं हो सकता"—डाल्फ़स ने कहा।

डाल्फ़स की पार्टी के कुछ लोग बाद में इस हत्या का समाचार सुनकर घटना-स्थल पर पहुँचे। उनमें से एक ने डाल्फ़स के लिए किसी डाक्टर या पादरी को बुला देने की आज्ञा चाही। आज्ञा न मिली।

३ बजकर ४५ मिनट पर डाल्फ़स के प्राण-पखेरू उड़ गये। नाज़ियों का इरादा था कि डाल्फ़स और आस्ट्रिया की स्वाधीनता—दोनों को साथ ही साथ ख़तम कर दिया जाय। यानी घटना के फ़ौरन् बाद में ही जर्मनी आस्ट्रिया पर चढ़ दौड़े। हिटलर अपनी फ़ौजों को भेजने ही वाला था कि मुसोलिनी उसके मार्ग में रोड़ा बनकर आ अटका। वह यह सहन न कर सकता था क्योंकि ऐसा होने से जर्मनी और इटली एक दूसरे के बिल्कुल निकट आकर पड़ोसी हो जाते। अधिक शक्ति पा जाने पर जर्मनी इटली के लिए भी दुःखदायी साबित हो सकता था। उसने यह धमकी दी कि अगर जर्मन फ़ौजें आस्ट्रिया पर हमला करेंगी तो मुझे आस्ट्रिया की रक्षा के लिए इटालियन सेना भेजनी पड़ेगी। मुसोलिनी के इस

वह बीच में पड़ जाने से उस समय तो नाज़ियों के इरादों पर पानी फिर गया किन्तु हिटलर का दाँत बराबर उस पर लगा रहा। इसी बीच में इटली को एबीसीनिया में लड़ना पड़ा। इसमें मुसोलिनी की शक्ति क्षीण हो गई। ब्रिटेन और फ्रांस से भी उसका मनमुटाव बढ़ रहा था, अतः मुसोलिनी और हिटलर आपस में एक दूसरे के बराबर नज़दीक आते गये और अन्त में दोनों का यह सम्बन्ध 'रोम-बर्लिन-धुरी' की स्थापना हो जाने से मित्रता के रूप में बदल गया।

"रोम-बर्लिन-धुरी" की स्थापना होने से इटली और जर्मनी एक सूत्र में बँध गये। अब हिटलर का रास्ता साफ़ हो गया। उसने चन्द घंटों के अन्दर आस्ट्रिया की स्वाधीनता का ख़ात्मा कर दिया और सारा यूरोप तमाशा देखता रह गया। 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाली लोकोक्ति पूर्णतया चरितार्थ हुई। आस्ट्रिया पर आधिकार जमाने से पहले हिटलर ने वहाँ के चांसलर डाक्टर शुसनिग को मुलाक़ात करने के लिए बुलाया। इस मुलाक़ात में उसने डाक्टर शुसनिग को स्पष्टरूप से बतला दिया कि वह आस्ट्रिया को जर्मन-राष्ट्र में मिलाना चाहता है। डाक्टर शुसनिग हिटलर की इस उद्दण्डतापूर्ण माँग को पूरी करने के लिए सहमत न हुए। यह देखकर हिटलर ने पहले आस्ट्रिया के सरकारी पदों पर नाज़ी-दल के लोगों की नियुक्ति करने की सोची। मन्त्रिमंडल में दो सदस्य नाज़ीदल के हो गये। इन दोनों को क्रमशः गृहसदस्य और वैदेशिक मंत्री के पदों पर रक्खा गया। साथ ही आस्ट्रिया की

सरकार ने जिन नाज़ियों की बग़ावत के अपराध में कारागार में डाल रक्खा था उन सबको भी एकदम रिहा कर दिया गया। यह आस्ट्रिया के अन्त की शुरुआत थी।

१६३८ के मार्च के महीने में ११ तारीख़ को हिटलर ने जर्मन-सेना को आस्ट्रिया की सीमा की ओर कूच करने का हुक्म दे दिया। डाक्टर शुसनिग को बर्लिन से चुनौती दी गई कि वह तुरन्त त्यागपत्र दें। बेचारे के सामने दो ही मार्ग थे—या तो त्यागपत्र देना या आस्ट्रियन सेना को भी मुक़ाबले के लिए भेजना। कौन-सा रास्ता इख़्तियार करें यह निश्चय करने के लिए डाक्टर शुसनिग को कुछ ही घंटे का मौक़ा था। हारकर उन्होंने त्यागपत्र देना निश्चय कर लिया। निम्नलिखित शब्दों में उन्होंने आस्ट्रियन जाति से बिदाई ली—

"मैं आस्ट्रिया के लोगों को यह बतला देना चाहता हूँ कि पशुबल के आगे हमें झुकना पड़ा है, क्योंकि इस मौक़े पर हम रक्त बहाना नहीं चाहते। इसीलिए आस्ट्रियन सेना को भी यह आज्ञा दे दी गई है कि वह जर्मन-सेना का सामना न करे।"

१३ मार्च को शाम के ७½ बजे आस्ट्रिया की पुरानी सरकार ख़त्म हो गई और उसे जर्मनी का एक प्रान्त मान लिया गया। मुसोलिनी ने हिटलर की इस सफलता पर उसे बधाई का तार भेजा जिसका उत्तर हिटलर ने यों दिया—

"मुसोलिनी, मैं तुम्हारी इस कृपा को कभी नहीं भूलूँगा।"

डाक्टर शुसनिग को नज़रबन्द कर लिया गया। एक वर्ष से

अधिक समय तक उन्हें वियना के एक होटल में नज़रबन्द रहना पड़ा। इस अरसे में उनके ऊपर अनेक क्रूर अत्याचार किये गये। बाहरी दुनिया की उन्हें कुछ भी ख़बर न मिलती थी। उनके आस-पास हरदम नाज़ी सिपाहियों का संगीनों का पहरा रहता था। उन्हें भिन्न-भिन्न प्रकार से हर समय परेशान किया जाता था। सिगरेट के ख़ूब पियक्कड़ होते हुए भी आपको कभी एक सिगरेट तक नहीं दी जाती थी। उन्हें अपने १४ वर्षीय पुत्र, वृद्ध पिता, छोटे भाई तथा अपनी स्त्री का कुशल-मंगल आदि का समाचार तक न मिल पाता था। बड़ी मुश्किल से उनकी स्त्री ने एक बार अपने पति से मिलने की आज्ञा प्राप्त कर ली थी। एकाएक आप अपनी धर्मपत्नी से पूछ बैठे—"दुनिया का आजकल क्या हाल है ?" नाज़ी अधिकारियों ने मेडम शुसनिग को इस प्रश्न का उत्तर देने से क़तई मना कर दिया।

आगे चलकर जब जर्मनी ने पोलैण्ड पर आक्रमण किया तो हिटलर की ओर से उनसे कहा गया कि जर्मनी की ओर से लड़ने के लिए आस्ट्रियावालों से अपील करें। देशभक्त शुसनिग ने फ़ौरन् इनकार कर दिया। जब हिटलर ने उनसे कोई काम बनते न देखा तो उन्हें फ़ौरन् गोली से उड़ा दिया गया। यह था नाज़ियों की क्रूरता और बर्बरता का अनेक में से एक उदाहरण।

हिटलर द्वारा आस्ट्रिया का जर्मनी में मिलाया जाना आधुनिक इतिहास की एक आश्चर्यजनक घटना है। कुछ ही घंटों के अन्दर यह प्राचीन देश स्वतंत्र राष्ट्र की हैसियत से संसार के नक़शे से मिट

गया । वह नाज़ी प्रभुत्व क़ायम होने से जो कुछ हुआ उसका वर्णन पं० जवाहरलाल नेहरू ने इस प्रकार किया है—

"आस्ट्रिया में जर्मन नाज़ियों के आगमन के साथ ऐसी भयानकता आई जैसी जर्मनी में नाज़ियों के प्रभुत्व के शुरू के दिनों में भी नहीं दिखाई पड़ी थी । यहूदियों पर बड़ा अत्याचार हुआ और वे अब भी मुसीबतज़दा हैं । जो वियना शहर एक दिन अपनी ख़ूबसूरती और संस्कृति के लिए मशहूर था, वहाँ आज बर्बरता का राज्य है और एक बीभत्सता के ऊपर दूसरी बीभत्सता हो रही है ।"

(दुनिया का रंग-मंच—पृष्ठ १६)

आस्ट्रिया की इस हत्या से जर्मनी के हाथ क्या लगा ? सबसे पहला लाभ तो हिटलर को यह हुआ कि उसकी जनशक्ति १० फ़ीसदी से भी ज़्यादा बढ़ गई । बेशक़ीमती कच्चे माल का ख़ज़ाना उसके हाथ लगा । इनके अतिरिक्त काफ़ी बड़ी रक़म भी जर्मनों के हाथ लगी । अनुमान किया जाता है कि इस लूट से क़रीब क़रीब २९०,०००,००० मार्क उसे मिल गये ।

चेकोस्लोवाकिया का अंत

आस्ट्रियन स्वतंत्रता के अपहरण की स्याही अभी इतिहास के पन्नों से सूखने भी न पाई थी कि उसने झट चेकोस्लोवाकिया का गला धर दबोचा । चेकोस्लोवाकिया एक उन्नत और धनी राष्ट्र था । उसके उद्योग-धंधों की हालत बहुत अच्छी थी । इसके अन्दर

प्रान्त का नाम था सुडेटन। इसके रहनेवाले जर्मन-भाषा बोलते थे। इन्हीं सुडेटनों के अल्पमत का प्रश्न उठाकर हिटलर ने आन्दोलन करना शुरू कर दिया। चेकोस्लोवाकिया की सरकार के ऊपर दोषारोपण किया गया कि सुडेटन प्रान्त के जर्मनों के साथ उसका सलूक बुरा है। पं० जवाहरलाल नेहरू अपनी पुस्तक में आगे चलकर इसी सम्बन्ध में साफ़-साफ़ लिखते हैं—

"यह बात भी बिल्कुल ठीक थी कि चेकोस्लोवाकिया में अल्पमत के साथ जितना अच्छा सलूक किया जाता था वैसा मध्य यूरोप में किसी भी अल्पमत को हासिल न था। असली सवाल तो अल्पमत का न था, बल्कि सारे दक्षिण-पूर्व यूरोप पर प्रभुत्व जमाने का हिटलर का इरादा था। वह इस इरादे को ज़बरदस्ती और युद्ध से पूरा करना चाहता था।"

(दुनिया का रंग-मंच—पृष्ठ २०)

सुडेटनों के लिए हिटलर ने जितनी माँगें पेश की थीं उन्हें भी चेकोस्लोवाकिया की सरकार ने मान लिया। उसे फिर भी सन्तोष न हुआ—और माँगें पेश हुईं। उनका ताँता बराबर लगता ही चला गया। "साफ़-साफ़ बात यह थी कि हिटलर का उद्देश्य इस प्रजातंत्रराष्ट्र को ख़त्म कर देना था।" मेमने और भेड़ियावाली कहानी अमल में लाई जा रही थी।

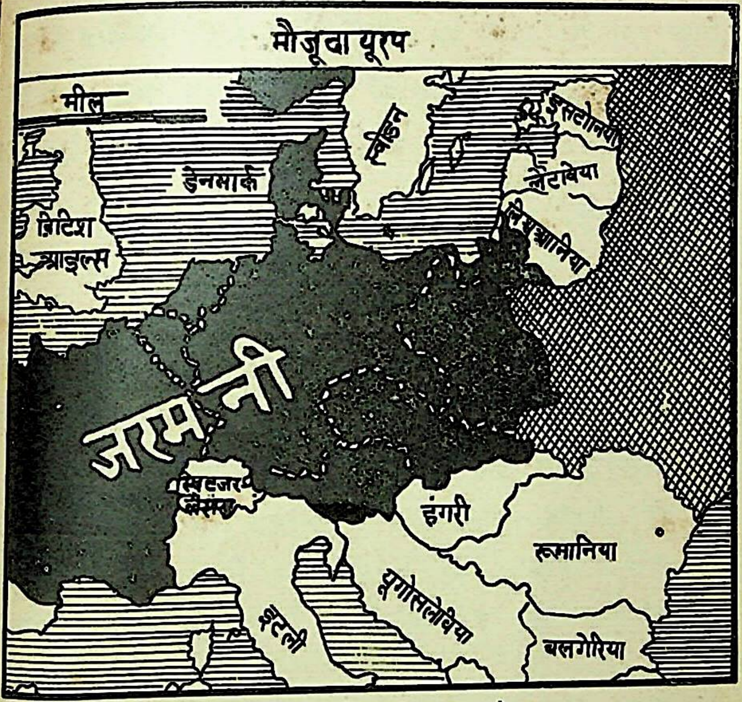
ब्रिटेन और फ़्रांस के कहने-सुनने से चेक सरकार हिटलर की माँगों के आगे सिर झुकाती ही चली गई। आख़िरकार हिटलर ने चेकोस्लोवाकिया के बड़े-बड़े क्षेत्रों को अपने क़ाबू में कर लेने की

माँग रक्खी और धमकी दी कि यदि यह माँग पूरी न की गई तो जर्मन-सेना और चेकोस्लोवाकिया की सरकार का मुक़ाबला होगा। सारा यूरोप लड़ाई की आशंका से भयभीत हो रहा था। परिणाम यह हुआ कि फ़्रांस के प्रधान मंत्री दलेदियर, इटली के मुसोलिनी, ब्रिटेन के प्रधान मंत्री मिस्टर चेम्बरलेन और हिटलर इन सबकी मुलाक़ात म्यूनिक में हुई। चेकोस्लोवाकिया की आज़ादी का ख़ात्मा हो गया। थोड़े से भाग को छोड़कर सारा राष्ट्र जर्मनी के पेट में चला गया। जो भाग बचा उसकी भी हैसियत एक उपनिवेश की हैसियत से बढ़कर न रही।

इस प्रकार चेकोस्लोवाकिया के बलिदान का काण्ड भी समाप्त हुआ। यूरोप की भूमि पर रणचंडी का ताण्डव-नृत्य उस समय होने से रुक गया।

पोलैण्ड की हत्या

पर बकरे की माँ कब तक खैर मना सकती है ? म्यूनिक में चेकोस्लोवाकिया की बलि लेकर भी हिटलर की दानवी क्षुधा तृप्त न हुई। मेमल भी थोड़े दिन पहले ही उसकी इसी क्षुधा का ग्रास बन चुका था। आस्ट्रिया, चेकोस्लोवाकिया और मेमल—तीनों उसके पेट में पहुँचकर पच भी न पाये होंगे कि उसकी गृध्र-दृष्टि पोलैण्ड पर पड़ी और उसे भी निगल जाने की उसने कमर कस ली। पोलैण्ड को इतनी जल्दी उसका शिकार बनना पड़ेगा, इसकी आशा कम थी। पर जो लोग सारी उपाधियों की जड़—हिटलर—



यूरोप के देशों की जनसंख्या

(जर्मन आक्रमण के पहले)

ब्रिटेन ४७,२८९,०००; फ्रांस ४१,९५०,०००; जर्मनी ६६,०३०,५००; इटली ४३,५७८,०००; सोवियट रूस १७०,१२६,०००; पोलैण्ड ३४,५२१,०००; रूमानिया १९,६४६,०००; चेकोस्लोवाकिया १३,३६०,३००; यूगोस्लेविया १५,४००,०००; हंगरी १०,०४९,०००; बलगेरिया ६०,७७,०००; यूनान ६,९३६,०००; टर्की १६,१५८,०००; आस्ट्रिया ६,७६०,२००; नार्वे २,९०८,०००; स्वीडन ६,२८५,०००; डेनमार्क ३,७०६,३००; फ़िनलैण्ड ३,६६७,०००; लिथुआनिया २,३७४,०००; (मेमल १५२,०००); लेटविया १,९७१,००० ; अस्टोनिया १,१३१,१२५ ; स्विटज़रलैंण्ड ४,१८३,०००; बेल्जियम ८,३३१,०००; हालैण्ड ८,५५६,९२० ।

चरित्र से परिचित हैं, वे जानते हैं कि वह संसार के उन लोगों में से है जो न कभी शान्ति से खुद बैठ सकते हैं और न अपने पड़ोसियों को ही शान्ति से बैठा रहने दे सकते हैं।

क्या आप जानते हैं ?

१. पोलैंड—यूरोप का पहला देश था, जिसने अपने यहाँ शिक्षा-विभाग की स्थापना की।

२. पोलैंड—आबादी और क्षेत्रफल की दृष्टि से यूरोप का छठे नंबर का राष्ट्र था। क्षेत्रफल में रूस, फ्रांस, जर्मनी, स्पेन और स्वीडन ही उससे बढ़े हुए थे और आबादी में रूस, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन और इटली के बाद उसी का नम्बर आता था।

३. पोलैंड—में सब मिलाकर ३ करोड़ ४५ लाख मनुष्य रहते थे। इनमें से ७,५०,००० जर्मन, १५,००,००० रूसी और ५०,००,००० यूक्रेनियन थे।

४. पोलैंड—के लोगों का मुख्य पेशा खेती ही था। उसकी आबादी के ६१ फ़ीसदी लोग खेती करते थे।

५. पोलैंड—के किसान भारतवर्ष की तरह ही ग़रीब थे।

भौगोलिक तथा राजनीतिक दृष्टि से पोलैण्ड को 'यूरोप की कुंजी' कहा जा सकता है। मध्य-यूरोप में स्थित यह देश पूर्व और पश्चिम दोनों ओर से दो ज़बरदस्त पड़ोसियों के बीच में घिरा

हैं। पूर्व की ओर रूस है और पश्चिम की ओर जर्मनी। अपनी इस भौगोलिक स्थिति के कारण ही पोलैएड को प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय कलह की भट्टी बनना पड़ा है। यह सदैव परस्पर विरोधिनी संस्कृतियों और सेनाओं के युद्ध का क्षेत्र बना है। जर्मनों, स्कैंडी-नेवियनों, स्लैवों, तातारों तथा तुर्कों में से सबने कभी-न-कभी इसे अपनी अमानुषी प्रवृत्तियों का क्रीड़ा-स्थल बनाया है। वहाँ के निवासियों को इन सभी जातियों से लोहा लेना पड़ा है। मध्य-काल में पूर्व और पश्चिम के देशों के बीच व्यापारिक तथा सैनिक आवागमन भी इसी में होकर होता था। अब इसका वह व्यापारिक महत्त्व तो नहीं रहा, पर राजनीतिक दृष्टि से अब भी इसका वही महत्त्व चला आता है। दो ज़बरदस्त पड़ोसियों के बीच पड़ने के कारण इसका दोनों की महत्त्वाकांक्षाओं की वस्तु होना भी स्वाभाविक ही था। अतः रूस और जर्मनी, दोनों ही की दृष्टि इस पर लगी रहती है। ज़ब-जब मौक़ा मिला, इन देशों में से कभी किसी ने और कभी किसी ने इसको हथिया लिया। कभी-कभी तो तीन-चार पड़ोसी राष्ट्रों ने इसका बँटवारा कर लिया।

यह बात नहीं है कि पोलैएड का इतिहास सदैव ही दासता और परतंत्रता का इतिहास रहा है। उसका इतिहास उज्ज्वल स्थानों से भी भरा पड़ा है। ईसा की दसवीं शताब्दी में ही उसका राज्य बाल्टिक-सागर से लेकर कारपेथियन-समुद्र तक फैल गया था। बारहवीं और तेरहवीं शताब्दी में देश में गृहयुद्ध चलते रहे और तातार-जाति के आक्रमण होते रहे। चौदहवीं और पन्द्रहवीं शताब्दी

फिर इसकी उन्नति होने लगी, यहाँ तक कि उन दिनों यह यूरोप के बहुत शक्तिशाली और उन्नत देशों में गिना जाने लगा। क्रेकाउ का विश्वविद्यालय यूरोप-भर के छात्रों की शिक्षा का केन्द्र था। इसी युग में पोलिश-साहित्य की भी अभूतपूर्व उन्नति हुई। उस समय की प्रशंसा में एक अमेरिकन ने लिखा है—

"सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दियों में पोलैण्ड का देश यूरोप के सब देशों से अधिक स्वाधीन देश था। यही वह देश था, जहाँ सबसे ज़्यादा शासन-विधान, नागरिकता तथा ज्ञान-सम्बन्धी बातों की स्वतन्त्रता थी। ऐसे युग में, जब कि धर्म के नाम पर हत्याएँ हो रही थीं और युद्ध चल रहे थे, पोलैण्ड इस तरह की बुराइयों से बिलकुल बरी था। पश्चिम के सब देशों से धार्मिक अत्याचारों के कारण भागकर आनेवाली जातियों के लिए पोलैण्ड एक प्रकार का शरण-स्थान बन गया था, जहाँ उनके साथ निहायत सहिष्णुता का बर्ताव किया जाता था। उन दिनों आसपास के देशों के ग़रीब और दीन-दुखी निवासियों के लिए—जिनमें जर्मन, यहूदी, चेक, आर्मीनियन, रूसी और तातार आदि सभी जातियों के लोग सम्मिलित थे—पोलैण्ड एक प्रकार का स्वर्ग बना हुआ था।"

अठारहवीं शताब्दी में पोलैण्ड के भाग्य ने फिर पलटा खाया। इसकी हालत बहुत कमज़ोर हो गई। इसका एक विशेष कारण था। इस समय यूरोप के सब राष्ट्रों की श्रद्धा सामन्त-प्रथा से उठ चुकी थी। ज़मींदारी और जागीरदारियाँ जगह जगह नष्ट हो रही थीं। उस समय पोलैण्ड ने इस प्रकार के परिवर्तन को अपनाने से

इनकार कर दिया था। वहाँ उसी पुरानी सामन्त-प्रथा का बोलबाला रहा। इसका परिणाम यह हुआ कि वह राष्ट्रीयता के सूत्र में न बँध सका और उसकी अवनति होने लगी। धीरे-धीरे उसका वह प्राचीन वैभव नष्ट हो चला और सारा देश टूक-टूक होकर रूस, प्रशा और आस्ट्रिया के अधिकार में चला गया।

राष्ट्रों के अवसान तथा अभ्युदय की कहानी सर्वत्र क़रीब-क़रीब एक-सी ही पाई जाती है। किसी देश की सीमा नष्ट की जा सकती है; पर उसके अन्दर रहनेवाली जाति का नाश नहीं होता। संभव है, कोई जाति काल के थपेड़े खाकर धूल में मिली रहे—ठीक उसी बीज के समान, जो जाड़ों अथवा गर्मियों के दिनों में अपने फूल या फल से अलग होकर कई मास तक धूल-मिट्टी में मिला रहता है। यहाँ तक कि साधारण रूप से हम उसे देख भी नहीं पाते। पर वर्षा-ऋतु आने पर वही बीज फिर उगकर—हरा-भरा होकर—हमारी नज़रों के सामने आने लगता है।

ठीक यही हाल पोलैण्ड का भी हुआ। लगभग डेढ़-दो शताब्दियों तक यूरोप के नक़शे से इसका नाम मिट गया; पर पोलिश-जाति तो थी ही। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध में उन लोगों में राष्ट्रीयता के भाव फिर ज़ोर मारने लगे। फ्रांस की राज्य-क्रान्ति का भी प्रभाव पड़ा ही था। होते-होते सन् १९१४ का ज़माना आ पहुँचा और यूरोप में रणचण्डी हुङ्कार उठी। पोलैण्ड ने अपनी खोई हुई आज़ादी को फिर से प्राप्त करने का यह सुनहला मौक़ा समझा। सौभाग्य से पिलुसुड्स्की-जैसा देशभक्त, राजनीतिज्ञ

तथा नेता भी उस समय मिल गया। पोलैण्ड में इसी पिलुसुड्स्की के अध्यवसाय से फिर स्वतंत्रता की गंगा बहने लगी—पिलुसुड्स्की अपने देश का भगीरथ बन गया।

जब १९१८ ई० में महायुद्ध समाप्त हुआ, तब पोलैण्ड को फिर से एक स्वतन्त्र देश बना दिये जाने की समस्या पर विचार हुआ। रूस अपनी क्रांति के कारण युद्ध से पहले ही हट गया था; आस्ट्रिया और प्रसा (जर्मनी) परास्त हो चुके थे। इन्हीं के नीचे पोलैण्ड दबा पड़ा था। यद्यपि मध्य-यूरोप की जातियों ने, जिनकी ओर से पोलैण्ड लड़ा था, पहले ही उसकी स्वामिभक्ति के पारितोषिकस्वरूप उसको स्वाधीन करने का वचन दे दिया था; पर यह सब एक कोरी राजनीतिक चाल थी।

अमेरिकन राष्ट्रपति विल्सन की कृपा से पोलैण्ड एक स्वतंत्र राष्ट्र बना दिया गया। इसकी रचना रूस, जर्मनी और आस्ट्रिया तीनों से कुछ-कुछ भाग लेकर हुई। फ्रांस की उस समय भी हार्दिक इच्छा थी कि पोलैण्ड को खूब शक्तिशाली बना दिया जाय, जिससे वह दो कार्य साधने में समर्थ हो सके—(१) बोल्शेविक रूस के लिए एक अभेद्य दीवार हो जाय और (२) जर्मनी की शक्ति को सीमा से बाहर बढ़ने देने से रोकता रहे। वर्साई की संधि के समय होनेवाले "शान्ति-सम्मेलन" में पोलैण्ड और फ्रांस की सारी इच्छाएँ पूरी न हो सकीं; क्योंकि बहुत-सी बातों का जर्मनी ने बड़ा विरोध किया। पर अमेरिकन राष्ट्रपति विल्सन ने पोलैण्ड के सम्बन्ध में घोषित अपनी शर्त को तो पूरा कर ही डाला। वह शर्त

यह थी कि पोलैण्ड स्वतंत्र राष्ट्र होगा और उसे व्यापार के लिए बाल्टिक-सागर के तट पर एक बन्दरगाह भी मिलेगा।

इस घोषणा के अनुसार पोलैण्ड को डैन्ज़िग का बन्दरगाह मिला—वही डैन्ज़िग, जो आज से कुछ दिन पूर्व सारे संसार की चर्चा का लक्ष्य बना हुआ था और जो वर्तमान युद्ध का कारण हुआ। डैन्ज़िग पोलैण्ड की विस्चुला नदी पर स्थित है। पोलैण्ड की इच्छा थी कि डैन्ज़िग पूर्ण रूप से उसे मिल जाय; क्योंकि विस्चुला पोलैण्ड की नदी होने के कारण उसका अधिकार उस पर होना चाहिए। फिर पोलैण्ड को एक बन्दरगाह भी तो मिलना ही था। होते-होते अन्त में यह निश्चय हुआ कि डैन्ज़िग को राष्ट्रसंघ की देखरेख में एक 'स्वतंत्र नगर' बना दिया जाय और बन्दरगाह में पोलैण्ड को व्यापारिक सुविधाएँ दे दी जायँ।

तब से लेकर अब से कुछ ही दिन पहले तक डैन्ज़िग स्वतंत्र नगर चला आता था। इसकी अपनी ही पार्लमेंट थी, जो वहाँ की रेल, डाक, तार, शिक्षा तथा स्वास्थ्य आदि का प्रबन्ध करने में पूर्णतया स्वतंत्र थी। इस पार्लमेंट को 'वोकस्टाग' के नाम से पुकारते थे। बन्दरगाह के प्रबन्ध के लिए पाँच पोलों और पाँच डैन्ज़िग-निवासियों की एक संयुक्त कमेटी थी। डैन्ज़िग पर आनेवाले माल पर चुंगी वसूल करने का काम पोलैण्ड की सरकार ही करती थी। दोनों के पारस्परिक सम्बन्ध को ठीक रखने के लिए डैन्ज़िग में राष्ट्रसंघ की ओर से एक हाई कमिश्नर भी रहता था

डैन्ज़िग के अतिरिक्त पोलैण्ड और जर्मनी की पारस्परिक तनातनी का एक कारण और भी था। यूरोप के नक़शे को देखने से पता चलेगा कि पूर्वी प्रशा और जर्मनी के बीच में एक छोटी-सी भूमि की पट्टी भी है, जिसे 'कारीडर' (गलियारा) कहा जाता है। वर्साई की संधि के समय यह कारीडर भी पोलैण्ड को दे दिया गया था, जिससे उसका समुद्र से सीधा सम्बन्ध बना रह सके। पूर्वी प्रशा जर्मनी के साम्राज्य का एक भाग है। जर्मनी का सर्वेसर्वा हिटलर इस कारीडर को भी लेना चाहता था। उसने युद्ध से पहले जो अपनी चार माँगें पेश की थीं, उनमें एक यह भी थी कि इसी 'कारीडर' में होकर उसे पक्की सड़कें तथा रेलवे लाइनें बना लेने दी जायँ, जिससे वह अपने साम्राज्य के एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भाग (पूर्वी प्रशा) से अपना सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सके। मगर पोलैण्ड इस पर राज़ी न था; क्योंकि इसके माने तो यह हो जाते कि वह अपने शत्रु को ही अपने घर में आमंत्रित कर लेता।

सन् १९३४ में हिटलर ने पोलैण्ड के साथ दस वर्ष के लिए एक संधि कर ली थी, जिसमें दोनों ओर से यह वादा हो गया था कि संधि के समाप्त होने तक दोनों देश एक दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रहेंगे। इस संधि को पाँच वर्ष से कुछ ही अधिक ज़माना हुआ था कि हिटलर ने उसे भी तोड़ दिया। पहली सितम्बर सन् १९३९ को जर्मनी की सेना ने पोलैण्ड के नगरों पर बम बरसाना शुरू कर दिया।

पोलैण्ड ने प्राणों की बाज़ी लगा दी

जब जर्मनी हर तरह से पोलैण्ड की आज़ादी को हड़पने पर उतारू हुआ, तो पोलैण्ड भी उसकी घुड़कियों से दबकर आसानी से क़ाबू में आ जानेवाला नहीं था। प्राणपण से उसने अपनी स्वतंत्रता तथा सत्ता को बनाये रखने की कोशिश की। युद्ध छिड़ने से पहले पोलैण्ड ने उच्च स्वर से घोषणा की थी कि चेकोस्लोवाकिया अथवा आस्ट्रिया की घटना की पुनरावृत्ति पोलैण्ड की भूमि पर न होगी और संसार के किसी राष्ट्र से सहायता न मिलने पर भी वह जर्मनों का मुक़ाबला करेगा। डैन्ज़िग के बन्दरगाह को पोलैण्ड-निवासी पोलैण्ड का ही एक अंग बताते हैं। उनका कथन है कि यह बन्दरगाह विस्चुला नदी पर बसा है। विस्चुला पोलैण्ड में होकर बहती है, अतः डैन्ज़िग पोलैण्ड के लिए स्वाभाविक बन्दरगाह है। उसकी समृद्धि और वृद्धि तो पोलैण्ड के ही कारण हुई है। उसी की भीतरी उपज तथा चीज़ों की खपत के कारण डैन्ज़िग संसार का एक प्रसिद्ध बन्दरगाह बन गया है। बाल्टिक समुद्र-तट तक पहुँचने का उसके पास यही एक मार्ग है। उसकी स्थिति उसी तरह की है, जिस तरह मनुष्य के शरीर में दिल हुआ करता है, जहाँ से सारे शरीर को स्वस्थ रक्त मिलता है।

महात्मा गांधी की सहानुभूति

पोल-जाति ने जिस साहस के साथ आततायी का सामना किया



रूस और जर्मनी के संधिपत्र पर हस्ताक्षर किए जा रहे हैं।

है, उसकी प्रशंसा किये बिना नहीं रहा जा सकता । अपनी स्वाधीनता को बनाये रखने के लिए पोलैएड का यह कार्य सराहनीय तो है ही, साथ ही पराधीन जातियों के लिये आदर्श भी है। महात्मा गांधी ने स्पष्ट शब्दों में पोलैएड के भूतपूर्व प्रेसीडेएट को लिखा था—

"निस्सन्देह मेरा हृदय पूर्णरूप से पोलैएडवालों के साथ है, जो अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए इस अभूतपूर्व लड़ाई में लगे हुए हैं।.........मेरी यह कामना है कि यूरोप में होनेवाले इस पागलपन से भरे विनाश को रोकने की मुझमें शक्ति होती। मैं इस समय वीर पोल लोगों के पास जो कुछ भेज सकता हूँ, वह मेरी यह हार्दिक प्रार्थना ही है कि उनका यह भयंकर परीक्षा का समय शीघ्र समाप्त हो और कष्टों को सहन करने का उन्हें बल प्राप्त हो। आप लोगों का पक्ष न्यायपूर्ण है, और आपकी विजय निश्चित है; क्योंकि ईश्वर सदा न्याय की रक्षा करता है।"

यही नहीं, महात्माजी ने वायसराय से होनेवाली अपनी मुलाकात में अपनी व्यक्तिगत सम्मति भी यह कहकर साफ़ जता दी थी कि "मेरी हमदर्दी फ्रांस और ब्रिटेन के साथ है, जो इस आपत्ति-काल में पोलैएड की सहायता करने पर उतारू है।" महात्माजी की यह अपनी सत्यतापूर्ण दूरदर्शिता है। संसार में आततायी का साथ कौन देता है ?

बीसवीं सदी का आठवाँ आश्चर्य

अब तक संसार के सात आश्चर्य गिने जाते थे। उस दिन २१

अगस्त १९३९ को रूस और जर्मनी में मेल हो जाने से एक आठवाँ आश्चर्य उत्पन्न हो गया। जर्मनी का तानाशाह हर हिटलर इस बात को भली भाँति समझता था कि उसकी हाऊ-हड़प की नीति का विरोध करनेवाले मुख्यतया दो ही देश हो सकते हैं—रूस और फ्रांस। रूस से उसको जैसे को तैसावाला जवाब मिलने का खतरा था। यह बात जर्मन-राजनीतिज्ञ बहुत दिनों से कहते आये हैं कि जर्मनी की शक्ति पोलैण्ड में रूस की शक्ति को क्षति पहुँचे विना नहीं बढ़ सकती। इसी कारण हिटलर चुपचाप रूस से किसी प्रकार समझौता कर लेने का उद्योग करता रहा। उधर मिस्टर चेम्बरलेन को मास्को से अधिक बर्लिन पर भरोसा था। वे समझते थे कि शायद युद्ध की नौबत ही न आ पावेगी और कोई-न-कोई समझौते की सूरत ज़रूर निकल आवेगी। अतः उन्होंने अपना ध्यान बर्लिन पर केन्द्रित रक्खा। उधर हिटलर का हाथ क्षण-क्षण पर बदलने वाली संसार की राजनीतिक नाड़ी पर था। किसी नाज़ुक-से-नाज़ुक मौक़े पर कोई अधिक-से-अधिक आश्चर्यवाली चाल चल जाना नाज़ीदल और उसके नेता हर हिटलर का सदा का काम रहा है। 'हिटलरिज़्म' का सार ही यह है—यही है हिटलर की कूटनीतिज्ञता और उसकी सफलता की कुंजी।

समझौता हो तो गया, किन्तु पोलैण्डवाले सौदे में स्टालिन हिटलर से कूटनीतिज्ञता में बाज़ी मार ले गया। उसके देश का एक भी सिपाही पोलैण्ड की भूमि पर लड़ने न गया—भीत से उसने चाहे जो कुछ सहायता की हो—और माल-माल उसने हथिया



हिटलर की परेशानी

(रूस द्वारा पोलैण्ड का बहुत सा भाग हथिया लेने पर)

हिटलर—हाय ! मैंने इस रूसी भालू को खोल ही क्यों दिया ?

।कई हज़ार जर्मनों की जानें देकर और कई करोड़ का धन करके जिस मछली का हिटलर ने शिकार किया उसके हाथों हड्डियाँ ही लगीं और गोश्त और गूदा स्टालिन हड़प गया। की ३,४५,२१,००० की आबादी में से २,२०,००,००० की आबादी का भू-भाग तो जर्मनी के पास रहा है और १,२०,००,००० आबादी रूस को मिल गई है। जो भाग रूस के अधिकार में है वह आर्थिक दृष्टि से जर्मनीवाले भाग के मुक़ाबले में कहीं अच्छा है। अतः स्टालिन के लिए 'हल्दी लगी न फिटकरी चोखा निकला।'

युद्ध की विभीषिका

क्या ही अच्छा होता कि जर्मनी के नेता ब्रिटिश प्रधान की बात मान जाते, डैन्ज़िग अथवा पोलैण्डवाले मामले का अंतर्राष्ट्रीय पंचायत में रखकर निबटारा कर लेते और यूरोप— कौन कह सकता है सारा संसार—इस प्रकार युद्ध की विभी-का से बच जाता। बेचारा पोलैण्ड इस बात पर राज़ी था। भर के नेताओं ने हिटलर के पास युद्ध रोकने की अपीलें। हमारे बूढ़े 'बापू' ने भी हिटलर को एक बड़ा दर्द-भरा पत्र था; पर—

"प्रभुता पाय काहि मद नाहीं ?"

शक्ति के मद में हिटलर ने सबकी बातों को अनसुनी कर दिया। एक बड़ा खर्चीला तथा भयानक व्यापार है। गत महायुद्ध की

बातें संसार की स्मृति में अभी ज्यों-की-त्यों ताज़ी हैं, और न हम आशा करते हैं कि जर्मनी ही इतनी जल्दी उन्हें भूल गया होगा। पिछली सन् १६१४ की लड़ाई का कच्चा चिट्ठा देखने से मालूम हो सकता है कि आजकल की दुनिया में युद्ध के क्या माने होते हैं।

आजकल का युद्ध सचमुच ही मानव-सभ्यता के विनाश का कारण होता है। यूरोप को, या आगे चलकर सारे संसार को, एक इस प्रकार के घातक युद्ध में भाग लेने के लिए विवश करने में जर्मनी ने कोई बुद्धिमानी का काम नहीं किया और इसकी सारी ज़िम्मेदारी हर हिटलर पर रहेगी।

५०० निरपराध स्त्री-बच्चों को रोते-बिलखते हुए उठाकर घधकती भट्टी में डालकर भस्म कर देना या ५०० निरपराध स्त्री-बच्चों के ऊपर—जो शांतिपूर्वक अपने दैनिक काम में लगे हों—आकाश से बम बरसाकर उन्हें स्वाहा कर देना—इन दोनों बातों में हम कोई अंतर नहीं समझते।

पोल और चेक लोगों पर नाज़ियों के अत्याचार

चेकोस्लोवाकिया तथा पोलैण्ड को जीतकर भी नाज़ियों का कलेजा ठंडा नहीं हुआ। आए दिन वहाँ नाज़ी लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के अत्याचार कर रहे हैं।

जर्मनी के लोग चेक राष्ट्र को नष्ट करने के लिए सब तरह के उपायों का अवलम्बन कर रहे हैं। अनेक छात्रों को गोली से उड़ा दिया गया है, हज़ारों व्यक्तियों को नज़रबन्द कैम्प में रक्खा गया

। सभी चेक यूनिवर्सिटियाँ बन्द हो गई हैं। अस्पताल, प्रयोग-शालाएँ तथा पुस्तकालय लूट लिए गए या नष्ट कर दिए गए हैं। ...००० पत्रों तथा अखबारों को दबा दिया गया है। प्रतिष्ठित लोगों को नज़रबन्द कर लिया गया है। एक लाख मज़दूर जर्मनी में गुलाम बना लिए गए हैं। किन्तु पोलों पर जो अत्याचार किए जा रहे हैं उनके सामने चेक लोगों पर किए गए जुल्म भी फीके पड़ जाते हैं। पहले तो जर्मनों ने उन्हें गोलियों से उड़ाना शुरू किया ताकि वे डर जायँ। फिर नेताओं, ज़मींदारों, व्यापारियों तथा प्रतिष्ठित कार्यकर्त्ताओं को चुन-चुनकर मारने लगे। अनुमान किया जाता है कि १५,००० से अधिक नेता गोली से मार डाले गये हैं। सामूहिक रूप से हत्याकाण्ड अकसर किया जाता है। एक स्थान पर १३,००० पोलिस छात्रों को मार डाला गया जिनमें से कुछ की अवस्था सिर्फ़ १२-१३ वर्ष की थी। देश में अकाल पड़ गया है।

हाऊ-हड़प—२

हाऊ-हड़प—२

हिटलर ने न सिर्फ़ जर्मन-जाति को वरन् मनुष्य-जाति के एक बड़े हिस्से को वहशियों जैसा बेरहम बना दिया है।

—महात्मा गांधी

हिटलर के कार्यों का संसार की मनुष्य-जाति पर क्या प्रभाव पड़ा है? इसका उत्तर महात्मा गांधी की इन ऊपरवाली पंक्तियों में मिल जाता है जो उन्होंने अपने "हरिजन" के एक हाल ही के अंक में लिखी थीं। हिटलर और नाज़ियों से पहले भी समय-समय पर आततायियों और विजेताओं ने संसार के भिन्न-भिन्न भागों को अपने पैरों तले रौंदा है और जीते हुए देशों में लूट-खसोट और मार-काट भी मचाई है। सिकन्दर, चंगेज़, तैमूर, नादिरशाह और नेपोलियन आदि के नाम इसी श्रेणी के लोगों में आते हैं। आज हम उनके आक्रमणों और उनके तरीक़ों को मध्ययुग

की असभ्यता के लक्षण बताकर क्षमा किये जाने की दलील पेश करते हैं। आजकल यूरोप की इस वर्तमान लड़ाई में नाज़ियों की ओर से जिस निर्दयता को व्यवहार में लाया जा रहा है उसके देखते हुए मध्ययुग के विजेताओं के कारनामे भी फीके पड़ जाते हैं—मध्यकाल भी शरमाकर रह जाता है।

पोलैंड के बँटवारे का वर्णन पहले ही किया जा चुका है। इसके बाद हिटलर कुछ दिनों तक विश्राम लेने के लिए ठहरा रहा। इस बीच में रूस ने फ़िनलैण्ड को धर दबोचा और वह उसका भक्षण कर गया। अब फिर जर्मनी की बारी आई और इस बार उसने नार्वे, हालैण्ड, डेनमार्क, बेल्जियम, लक्समबर्ग और फ्रांस की स्वतन्त्रता का एक-एक करके अपहरण कर डाला।

नार्वे और डेनमार्क का बलिदान

यूरोप के नक़्शे को देखिये। उसके उत्तर में आपको एक बहुत बड़ा प्रायद्वीप फैला हुआ दिखाई देगा। इसे स्केन्डीनेविया के नाम से पुकारा जाता है। इस प्रायद्वीप में तीन देश स्थित हैं—नार्वे, स्वेडेन और फ़िनलैण्ड। इनके निकट ही डेनमार्क का छोटा-सा देश है। नार्वे, स्वेडेन, फ़िनलैंड और डेनमार्क ये चारों देश यूरोप भर में सबसे अधिक स्वतंत्र और शान्तिप्रिय थे। उन्हें अपने-अपने व्यापार और व्यवसाय को बढ़ाने की चिंता को छोड़कर यूरोप के अन्य झगड़ों से मतलब न था। ठंडी जलवायु होने के कारण इन प्रदेशों में खेती तो कम होती है पर खनिज

र्थ, बढ़िया चरागाह तथा जंगलात की अधिकता के कारण ये व्यापार और उद्योग-धंधों में काफ़ी आगे थे। आलू, जौ ाई इन देशों की मुख्य खेती की पैदावार थी । डेनमार्क अपने मक्खन, गायों तथा सुअरों के लिए संसार भर में सबसे ागे था । सारी दुनिया में जितना मक्खन तैयार होता है सका २८ फ़ी सदी केवल डेनमार्क में तैयार होता था । उसका त्रफल १६,५७५ वर्गमील था और आबादी क़रीब ३८ लाख थी। डेनमार्क में स्लेसविग हालस्टेन नाम का पहले एक बहुत उपजाऊ प्रान्त था। वह जर्मनी ने उससे बहुत दिन पहले ही बरदस्ती छीन लिया था। इसके छिन जाने से डेनमार्क के कलेजे ा मांस कट गया था। इससे भी पहले नेपोलियन के आक्रमणों ने उसके एक बहुत बड़े भू-भाग को तहस-नहस कर दिया था। ऐसी विकट परिस्थिति में भी डेनमार्क ने हिम्मत न हारकर बड़ी बुद्धिमानी से काम लिया और थोड़े ही दिनों में वह उन्नति कर दिखाई थी कि यूरोप के धनी देशों में उसका दूसरा नम्बर था।

नार्वे में मछली का व्यवसाय अधिक होता था। यहाँ के जहाज़ प्रतिवर्ष पाँच करोड़ मन मछली पकड़कर यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों में भेजते थे। इसके अतिरिक्त नार्वे के जंगलों से करोड़ों मन कागज़ की लुबदी बनकर बाहर के देशों को जाती थी। इसकी खानों से प्रतिवर्ष ६ करोड़ मन लोहा निकाला जाता था।

व्यावसायिक उन्नति के अलावा ये देश शिक्षा और संस्कृति की दृष्टि से भी काफ़ी आगे थे। इन देशों में प्राथमिक व माध्यमिक

शिक्षा अनिवार्य और मुफ़्त थी । डेनमार्क में तो उच्च शिक्षा के लिए भी विद्यार्थी को कुछ ख़र्च न करना पड़ता था ।

रूस द्वारा फ़िनलैण्ड के हथिया लिये जाने का ज़िक्र हम पहले ही कर चुके हैं । यहाँ उस विषय को विस्तार देने की आवश्यकता नहीं क्योंकि इस अध्याय में हिटलर की हाऊ-हड़प का वर्णन किया जा रहा है । उसके हिमायती स्टालिन और मुसोलिनी के कारनामों का वर्णन करने के लिए तो एक दूसरी ही स्वतंत्र पुस्तक की आवश्यकता होगी ।

स्वतंत्रता और शान्ति के पुजारी होने पर भी नार्वे और डेनमार्क को क्यों अपनी स्वतंत्रता से हाथ धोना पड़ा ? इसके दो कारण थे—(१) तृतीय जर्मन-साम्राज्य के स्वामी हर हिटलर की मर्ज़ी; और (२) इन दोनों देशों की महत्त्वपूर्ण भौगोलिक स्थिति । नक़शे में देखने से पाठकों को मालूम होगा कि नार्वे का देश उत्तरी सागर से शुरू होकर अटलाण्टिक महासागर के साथ-साथ होकर ध्रुवसागर तक चला गया है । इसका समुद्रतट भी सबसे अधिक कटा हुआ होने के कारण सुरक्षित बन्दरगाहों के लिए यूरोप भर में प्रसिद्ध है । डेनमार्क जर्मनी के ठीक उत्तर में स्थित है । इसी के वहाँ होने से जर्मनी का समुद्र-तट दो भागों में बँट जाता है । लगभग ३० वर्ष हुए तब जर्मनी ने अपने पूर्वी और पश्चिमी तट को मिलाने की ग़रज़ से ही कील नहर का निर्माण करा लिया था, फिर भी डेनमार्क का वहाँ होना उसकी आँख की किरकिरी बना हुआ था ।

मौजूदा लड़ाई के शुरू होने के थोड़े ही दिन बाद ब्रिटेन ने उत्तरी सागर में जर्मनी की नाकेबन्दी कर दी। इस नाकेबन्दी के कारण जर्मनी का व्यापार उस ओर से बन्द होना शुरू हुआ। नार्वे इस युद्ध में तटस्थ था। उस ओर होकर विदेशों के जहाज़ जर्मन-समुद्र-तट पर आ सकते थे। इस स्थिति से स्पष्ट हो गया होगा कि ब्रिटेन और जर्मनी दोनों ही नार्वे और डेनमार्क की स्थिति से लाभ उठाने की फ़िक्र में थे। ब्रिटेन को अपनी नाकेबन्दी की नीति में काफ़ी सफलता भी मिल रही थी। जर्मनी की चिन्ता बढ़ती जा रही थी। उसने अपनी मुक्ति के लिए इन दोनों देशों की स्वतंत्रता की बलि देने की ठानी। नार्वे और डेनमार्क दोनों को स्वप्न में भी जर्मनी की ओर से होनेवाले किसी आक्रमण की आशंका न थी। वे अपनी रक्षा के लिए पूर्णतया तैयार न थे। ९ अप्रेल के प्रातःकाल दो घंटे में ही जर्मनी ने डेनमार्क की राजधानी कोपेनहेगन पर क़ब्ज़ा कर लिया और शाम होते-होते सारा देश उसके अधिकार में आ गया। डेनमार्क के राजा और उसके मंत्रिमंडल ने विवश होकर शत्रु की अधीनता स्वीकार कर ली। उनके लिए और था भी क्या उपाय ? 'मरता क्या न करता' की कहावत के अनुसार डेनमार्क ने आत्मसमर्पण कर दिया और इस प्रकार नाज़ियों के हाथों अपना सर्वनाश न होने दिया। कहाँ जर्मनी की विशाल हवाई सेना और कहाँ डेनमार्क की केवल १४ हज़ार सेना, ६० हवाई जहाज़ तथा दो छोटे-छोटे बोट। डेनमार्क बिल्कुल शान्तिप्रिय देश था। उसने जर्मनी की तरह यूरोप भर में

देश को शत्रु के स्थान में समुद्र के अर्पण कर देते थे । भूमि की सतह समुद्र से नीची होने के कारण देश में पानी ही पानी हो जाता था और शत्रु को अपना-सा मुँह लेकर लौटना पड़ता था । डच जाति ने ऐसा करके कई बार अपने देश की रक्षा की थी । जर्मनी के हवाई जहाज़ों की मार के सामने यह पुराना तरीक़ा काम न दे सकता था । अतः जब नाज़ियों का हमला हुआ तो हालैण्ड अधिक दिनों तक सामने न ठहर सका । रानी विल्हेमिना अपने देश को नाज़ियों के पंजे में फँसता देखकर सहायता के लिए इंग्लैण्ड की ओर दौड़ी और इंग्लैण्ड ने सहायता के लिए वचन भी दिया । किन्तु शोक, उस सहायता के पहुँचने से पहले ही डच-मंत्रियों ने नाज़ी-आतंक से घबड़ाकर आत्मसमर्पण कर दिया ।

बेल्जियम यूरोप का सबसे घना बसा हुआ देश था । पिछली लड़ाई में बेल्जियम को धन-जन की बड़ी हानि उठानी पड़ी थी । सन् १८३० ई० में यह नीदरलैण्ड के साम्राज्य से अलग हो गया था और तब से लेकर अबतक स्वतंत्र चला आता था । उद्योग-धंधों की दृष्टि से बेल्जियम यूरोप के सर्वश्रेष्ठ राष्ट्रों में से था। यहाँ की फ़ैक्टरियों का बना हुआ सामान संसार के क़रीब-क़रीब सब देशों को जाता था । सन् १९३६ ई० में बेल्जियम के बादशाह लियोपोल्ड ने घोषणा की थी कि भविष्य में उसका देश तटस्थता की नीति व्यवहार में लाएगा । इसका सीधा-सादा अर्थ यह होता था कि यदि जर्मनी का फ़्रांस पर आक्रमण होगा तो बेल्जियम उसकी सहायता करने को बाध्य न होगा । बेचारे लियोपोल्ड ने

यह घोषणा नाज़ी हमले से अपने देश की रक्षा करने की ग़रज़ से की थी। वह नहीं चाहता था कि सन् १४ की लड़ाई की तरह फिर कभी उसका देश किसी यूरोपीय युद्ध का अखाड़ा बन जाय। इससे साफ़ ज़ाहिर है कि बेल्जियम किसी भी तरह से नाज़ियों को आक्रमण का बहाना तक देने को तैयार न था। फिर भी संसार जानता है कि नाज़ियों ने अकारण ही इस नन्हें से राष्ट्र पर आक्रमण करके उसकी स्वतंत्रता का देखते-दखते अंत कर डाला। बेल्जियम के मंत्रिमंडल के सदस्य हिम्मत न हारे थे—वे लड़ने को तैयार थे, किन्तु बादशाह लियोपोल्ड ने मंत्रियों की इच्छा के विरुद्ध जर्मन-सत्ता के आगे मत्था टेक दिया। अभागे बेल्जियनों की स्वतंत्रता का सूर्य उसी दिन अस्त हो गया।

फ़्रांस का भी पतन हुआ

बेल्जियम पर अधिकार होते ही फ़्रांस पर हमला करने का रास्ता साफ़ हो गया। फ़्रांस पर विजय पाने की जर्मनी की बड़ी प्रबल इच्छा थी। पिछले युद्ध में ब्रिटेन और फ़्रांस ने जर्मनी को हराया था। फ़्रांस और जर्मनी के संघर्ष की कहानी यों तो बहुत पुरानी है क्योंकि दोनों राष्ट्र एक दूसरे के पड़ोसी हैं, पर जब से हिटलर जर्मनी का सर्वेसर्वा हुआ, तब से तो फ़्रांस को निगल जाने का जर्मन-जाति का पक्का इरादा हो चुका था।

फ़्रांस का संसार के इतिहास में एक विशेष स्थान रहा है। विश्व-विजेता नेपोलियन यहीं का निवासी था। इसी देश ने

सबसे पहले क्रान्ति के द्वारा संसार को 'स्वतन्त्रता, समानता और बन्धुत्व' का पाठ पढ़ाया था। यही वह देश था जो १९१४-१८ के महायुद्ध में कन्धे से कन्धा भिड़ाकर ब्रिटेन के साथ जर्मनी और उसके सहायकों से लड़ा था। उसे पछाड़कर कड़ी से कड़ी शर्तें मनवा लेने में उसके प्रधान मन्त्री क्लेमेन्शो का बहुत हाथ था। जब इस बार नाज़ी सेनाओं ने फ्रांस पर आक्रमण करना शुरू किया तो संसार को यह आशा थी कि फ्रांस काफ़ी दिनों तक आक्रमणकारियों का मुक़ाबला करेगा। ब्रिटेन पूर्णरूप से फ्रांस के साथ था। ब्रिटिश प्रधान मन्त्री मि० चर्चिल की ओर से दोनों देशों की सरकारों को मिलाकर एक कर देने का प्रस्ताव भी हुआ था। अर्थात् विजय हो या पराजय, लड़ाई का अन्तिम परिणाम दुखदायी हो या सुखदायक, दोनों देशों का एक दूसरे से अटूट सम्बन्ध रहेगा। सुदिन अथवा दुर्दिन दोनों में फ्रांस के लिए ब्रिटेन की ओर से सहायता का यह आश्वासन कोई मामूली बात न थी, पर "होइहै सोइ जो राम रचि राखा।" बड़े अचरज से संसार ने देखा कि १५ दिन की मामूली लड़ाई के बाद ही फ्रांस ने जर्मनों के आगे घुटने टेक दिये और उससे अस्थायी सन्धि कर ली। फ्रांस के प्रधान मन्त्री मार्शल पेताँ ने फ्रांस की पराजय के कारणों को इन शब्दों में स्पष्ट किया था—"थोड़ी सेना, थोड़ी युद्धसामग्री और बाहरी मदद की कमी के कारण फ्रांस जर्मनी के आगे आत्मसमर्पण करने के लिए विवश हुआ है।"

जर्मनी की आबादी ८ करोड़ है और फ्रांस की केवल ४ करोड़।

इस हिसाब से एक तो वैसे ही जर्मनी की सेना फ्रांस की सेना से दुगुनी होनी चाहिए, फिर फ्रांस की सेना में नौजवानों की संख्या कम थी और बूढ़ों की ज़्यादा क्योंकि पिछली लड़ाई में फ्रांस की आबादी का एक बहुत सा भाग काम आया था और तभी से वहाँ बच्चों की पैदाइश कमी के साथ हुई है। इन कारणों के अतिरिक्त एक बात यह भी थी कि नाज़ी सेना आक्रमण के समय जिस बेरहमी के साथ शान्त नागरिकों, कारख़ानों और सरकारी और निजी इमारतों पर बम-वर्षा करती थी उसे देखकर फ्रांस की सरकार घबड़ा उठी थी। उधर इटली का तानाशाह मुसोलिनी भी हिटलर की सहायता के लिए मैदान में आ चुका था। अतः अपने सहायक ब्रिटेन से पूरी मदद पाने से पहले ही मार्शल पेताँ ने देश को जर्मन-आक्रमणकारियों के हाथों में सौंप दिया। ब्रिटेन फ्रांस की इस अधीरता पर अवाक् रह गया! अनेक फ्रांसीसी नेताओं और राजनीतिज्ञों ने मार्शल पेताँ के इस कार्य की निन्दा भी की।

नाज़ियों की अधीनता में मार्शल पेताँ फ्रांस के प्रधान मन्त्री की हैसियत से शासन कर रहे हैं। जर्मनी की सीमा के पास वाला देश का एक बहुत बड़ा भाग, जिसमें सुविख्यात नगर पेरिस भी शामिल है, नाज़ियों के अधिकार में है। मार्शल पेताँ की स्थिति एक दुभाषिये—नाज़ियों के एक एजेन्ट की सी है। इधर कुछ दिनों से फ्रांस में मार्शल पेताँ ने जर्मनों की देखादेखी एकतन्त्र शासन का बीज बोना शुरू किया है। प्रजातन्त्रशासन-पद्धति,

सकी स्थापना के लिए फ्रांस में खून की भयानक नदियाँ बही , को नष्ट करके पुनः एकतन्त्र शासन की ओर देश को ले जाया रहा है। 'स्वतंत्रता, समानता और बन्धुत्व' के सिद्धान्तों की न्मभूमि का यह पतन !! इसे दुर्भाग्य के अतिरिक्त और क्या जा सकता है।

छोटे-छोटे हिटलर

छोटे-छोटे हिटलर

फलित ज्योतिष में विश्वास रखनेवाले लोगों का कहना है कि प्रत्येक मनुष्य के भविष्य का संचालन बारह ग्रहों के हाथ में है। हिटलर के अतिरिक्त जर्मनी की बागडोर भी बारह छोटे-छोटे हिटलरों के हाथ में है। इनमें से अधिकांश उतने ही क्रूर हैं, उतने ही हिंसा-प्रेमी हैं और नाज़ीवाद के उतने ही कट्टर भक्त हैं जितना कि उनका सरदार—बड़ा हिटलर। अधिकांश में उनमें वही हिटलर की-सी भावुकता है—वही अन्धे देश-प्रेम का नशा।

हिटलरों की इस टोली में पूर्ण एकता हो, सो बात नहीं है। कई ऐसे हैं जो एक दूसरे को देखकर जलते हैं। इनकी इस आपसी तू-तू मैं-मैं को बढ़ाने में हिटलर को आनन्द आता है और वह खुद अपनी ओर से प्रायः ऐसी चाल चला करता है जिससे एक की दूसरे

से टक्कर हो जाती है। अपने सर्वशक्तिमान् स्वामी अडोल्फ़ हिटलर की कृपा-दृष्टि की चाह इनमें से हरएक को लगी रहती है। इसलिए यों भी आपस में मुक़ाबला चलता रहता है। बड़ा हिटलर इन सब पर पैनी नज़र रखता है। वह किसी को इतना ऊँचा चढ़ते हुए नहीं देख सकता कि वह बिल्कुल उसके नज़दीक ही आ जाय। जब उसने मार्शल गोरिंग की शक्ति को बहुत बढ़ते हुए देखा तो फ़ौरन् ख़ुफ़िया पुलिस का विभाग उससे छीनकर हिमलर के सुपुर्द कर दिया।

जनरल गोरिंग

प्रशिया का प्रधान मंत्री
प्रशियन सेना का सेनापति
पुलिस-विभाग का स्वामी
राइखस्टाग का सभापति
हवाई महकमे का मंत्री
जर्मन हवाई सेना का कमान्डर-इन-चीफ़
जंगलात का प्रधान अफ़सर
चार-वर्षीय योजना का कमिश्नर
फ़ील्ड मार्शल

ये एक-कम दस पद अकेले जनरल गोरिंग में केन्द्रित हैं। गोरिंग का जन्म १२ जनवरी १८६३ को बवेरिया-प्रान्त में हुआ। उसका घराना ऊँचा है—उसका पिता जर्मन-दक्षिण-पश्चिमी

अफ़्रीका का गवर्नर जनरल था । गोरिंग ने शिक्षा भी अच्छे ढंग की पाई है ।

२१ वर्ष की उम्र में गोरिंग जर्मनी की हवाई सेना में भर्ती हुआ । पिछली लड़ाई के ज़माने में उसने 'विक्टोरियाक्रास' जैसा जर्मनी का युद्ध-पदक प्राप्त किया था । लड़ाई समाप्त होने पर १९१९ में

> मैं यह जानता हूँ कि युद्ध न करना हमारे लिए एक त्याग का कार्य है । युद्ध जीवन की रक्षा का सर्वोत्तम साधन है । युद्ध को रोकने की कोशिश करने के मानी यह हैं कि प्रकृति के विकास के साधनों को रोक दिया गया ।
>
> —डाक्टर गोबेल्स

गोरिंग स्वीडन चला गया । वहाँ वह कैरिन फ़ोक नाम की एक सुन्दरी पर मोहित हो गया और उससे शादी कर ली । १९२२ में वह हिटलर का साथी बना । १९२३ के म्यूनिकवाले विद्रोह में वह भी शामिल था और बुरी तरह घायल हुआ था । इसके बाद वह इटली में जा छिपा और फिर वहाँ से भी पुनः स्वीडन लौट कर आ गया । उन दिनों उसका स्वास्थ्य बिल्कुल खराब हो चला था ।

गोरिंग की पत्नी का १९३२ में देहान्त हो गया । गोरिंग उसे बहुत प्रेम करता था । उसके मरने का उसने बड़ा शोक मनाया । उसकी मृत्यु स्वीडन में ही हुई थी किन्तु उसकी लाश की अन्तिम

क्रिया जर्मनी में लाकर की गई। अपने बर्लिनवाले नगर में गोरिंग ने अपनी मृत-पत्नी की याद में एक स्मृति-भवन बनवाया, जहाँ उसके चित्र के आगे गोरिंग प्रतिदिन घुटने टेककर प्रार्थना किया करता था। गोरिंग जैसे कठोर दिलवाले व्यक्ति में इस क़दर प्रेम का होना सचमुच एक आश्चर्य की बात थी !

१६३५ में गोरिंग ने एक अभिनेत्री से दूसरी शादी कर ली। उसकी यह शादी बड़ी धूम-धाम से हुई थी। हिटलर उसमें खुद मौजूद था। वर-वधू को इस अवसर पर ८० हज़ार पौंड के मूल्य की चीज़ें भेंट में मिली थीं।

गोरिंग को तड़क-भड़क और दिखावट बहुत पसन्द है। वह घमंडी भी बड़ा है और बड़ा महत्त्वाकांक्षी भी। ६ मार्च सन् १६३३ के दिन जब नाज़ियों की चुनाव में जीत हो चुकी और हिटलर का जर्मनी का चांसलर होना निश्चित हो गया, उसने अपना एक चित्र खिंचवाया। इसमें वह अपनी गोदी में एक किताब लिये बैठा है। किताब का नाम साफ़-साफ़ अक्षरों में पढ़ा जा सकता है— "नेपोलियन का जीवन।" वह शेर के बच्चों के पालने का शौक़ीन है। नर हो या मादा, इन सबका नाम वह रोम के सुप्रसिद्ध अभिमानी विजेता के नाम पर "सीज़र" रखता है।

जितना हिटलर खाने-पीने के मामलों में सादगी बरतता है उतना ही गोरिंग मांसाहारी है। हिटलर की तरह ही वह आवेश-पूर्ण है। उसकी निर्दयता रोंगटे खड़े कर देनेवाली है। इसमें उसने मध्यकाल के सम्राटों को भी पीछे छोड़ दिया है। किसी पर संदेह

पर ही बिना कुछ पूछेताछे उसका सर्वनाश कर दो—यही
का सिद्धान्त है। वह दूरदर्शी नहीं है और बड़ा क्रोधी है।
जब से उसके हाथ में पुलिस का प्रबन्ध आया है तब से लेकर
दिसम्बर सन् १९३७ तक १२,८६३ पुरुषों को नपुंसक और स्त्रियों
को बाँझ बना डाला गया है। ६०,००० यहूदी देश छोड़कर भाग
गये हैं। जून १९३३ से लेकर जून १९३४ तक जिन २१४
व्यक्तियों को मृत्यु का दंड दिया गया था उनमें से २१२ का
शिरच्छेदन किया गया। जिन व्यक्तियों को कारावास का दंड
मिला, उनकी संख्या २८०,३०८ थी। सब मिलाकर इन्हें
६,४२१ वर्ष की सज़ा काटनी थी। इनके अतिरिक्त १८४
व्यक्तियों को 'भागने की कोशिश करने पर गोली मार दी गई',
,००० स्त्री-पुरुष नागरिक अधिकारों से वंचित कर दिये गये
और ४६,००० को कंसेन्ट्रेशन कैम्पों में बन्द कर दिया गया।

हिटलर के कमरे में सम्राट् फ्रेडरीक का चित्र टँगा हुआ है और
मुसोलिनी का 'बस्ट' रक्खा है। गोरिंग ने भी अपने रहने के
कमरे में हिटलर का संगमरमर का बना हुआ 'बस्ट' रख छोड़ा है।

डाक्टर गोबेल्स

किसी देश के प्रेस पर क़ाबू करने से तानाशाही का आधा काम
सफल हो जाता है। डाक्टर जोसेफ़ पाल गोबेल्स—जर्मनी के
प्रचार मंत्री—ने यह बात सत्य सिद्ध कर दिखाई है।

'काने, खोरे, कूबरे, कुटिल कुचाली जानि'

काने, लँगड़े, कुबड़े स्वभाव से ही खोटे होते हैं। गोस्वामी

तुलसीदासजी की इस पंक्ति से डाक्टर गोबेल्स के व्यक्तित्व और चरित्र को समझने में बड़ी सहायता मिलती है। डाक्टर में लँगड़ेपन का दोष है—उसका पैर जन्म से ही फिरा हुआ है। अपनी चालाकी तथा होशियारी के कारण ही वह आज जर्मनी के प्रचार विभाग का सर्वे-सर्वा बना हुआ है।

रेडियो	ललित कलाएँ
प्रेस	विदेशियों से सम्बन्ध
सिनेमा	उत्सव-समारोह
थियेटर	पार्टी कांग्रेस
लेखन	शिक्षा-सम्बन्धी साहित्य
विज्ञापन	भाषण

इन सब पर उसे असीमित अधिकार प्राप्त हैं।

राइन प्रदेश में सन् १८९७ में डाक्टर गोबेल्स का जन्म हुआ। पिछले यूरोपीय महायुद्ध के छिड़ने पर जब इसके सहपाठी लड़ाई पर चले गये थे, डाक्टर गोबेल्स अपने लँगड़ेपन के कारण घर पर ही रहा। उसका यह शारीरिक दोष उसकी महत्त्वाकांक्षाओं को नहीं दबा सका। नाज़ीदल में वही सबसे ज़्यादा कुचक्री है—वही सबसे ज़्यादा ज़हरीला—वही सबसे ज़्यादा शिक्षित। हीडिलबर्ग की यूनीवर्सिटी से उसने पी-एच. डी. की डिग्री प्राप्त की है।

गोबेल्स का पिता अध्यापक था, बाबा किसान, नाना दस्तकार और सब के सब ग़रीब। उसने कई स्कूलों में शिक्षा प्राप्त की और

अपनी योग्यता के कारण यूनीवर्सिटी की शिक्षा प्राप्त करने के लिए, वह हीडिलबर्ग पहुँचा । छात्रावस्था में उसकी इच्छा साहित्यसेवी बनकर जीवन व्यतीत करने की थी । उसने काफ़ी लिखा भी है । उसकी लिखी हुई किताबों की संख्या १४ है ।

उसकी स्त्री ने अपने पहले पति को तलाक़ देकर उससे शादी की थी । अपनी चांसलरी के शुरू के दिनों में हिटलर डाक्टर की इस पत्नी की गाने की पार्टियों में बराबर जाया करता था । कहने की आवश्यकता नहीं कि इससे डाक्टर गोबेल्स को अपनी राजनैतिक आकांक्षाओं को पूरा करने में बड़ी सहायता मिली ।

डाक्टर गोबेल्स का क़द भी बहुत छोटा है । उसकी ऊँचाई पाँच फ़ीट पाँच इंच से अधिक नहीं है । सन् १९२२ में म्यूनिक में होनेवाली एक सभा में गोबेल्स यों ही एक दिन जा पहुँचा । हिटलर उस दिन का प्रमुख वक्ता था । उसी दिन डाक्टर पर उसके भाषण का बड़ा प्रभाव पड़ा । वह नाज़ी हो गया और अपनी जन्मभूमि में आकर उसने नाज़ीदल का संगठन करना शुरू कर दिया । हिटलर तो उसके कार्यों की प्रशंसा करता ही । हिटलर को छोड़कर दूसरे नम्बर पर डाक्टर गोबेल्स के ही भाषणों का प्रभाव जनता पर पड़ता था । हिटलर ने उसे बर्लिन में नाज़ीदल का प्रचार करने के लिए भेज दिया । कुछ दिन बाद गोबेल्स ने 'एंग्रिफ़'-नामक समाचार-पत्र चलाया । इससे उसके हाथ में दूनी शक्ति आ गई ।

क्या भाषणों में और क्या लेखों में डाक्टर गोबेल्स जर्मनी के

सब नेताओं से ज़्यादा तीखा है। एक बार उसके विरुद्ध १२६ मान-हानि के मुक़द्दमे चल रहे थे। बहुत दिन पहले एक बार उसने अपने अख़बार 'एंग्रिफ़' में ऊपर की लाइन में प्रकाशित किया—**क्या हिंडनबर्ग अभी ज़िन्दा है?** प्रेज़ीडेन्ट हिंडनबर्ग ने उसके खिलाफ़ मुक़दमा चला दिया। गोबेल्स को ८०० मार्क का दंड देना पड़ा। इस पर डाक्टर ने लिखा कि "हिंडनबर्ग यहूदियों और मार्क्सवादियों के पंजे में है।"

हम पहले ही किसी स्थान पर लिख चुके हैं कि नाज़ीदल और हिटलर की सफलता में प्रचार—प्रोपेगेण्डा—का विशेष स्थान रहा है। जिन साधनों का इस कार्य के लिए प्रयोग किया गया है, जो तदबीरें काम में लाई गई हैं—वे सब डाक्टर गोबेल्स के दिमाग़ की उपज हैं। आज गोबेल्स जर्मनी के 'तीसरे साम्राज्य' के प्रेस का मालिक बना हुआ है। एक भी शब्द बिना उसकी स्वीकृति के प्रेस में नहीं छप सकता। उसे जर्मन-मंत्रिमंडल के सदस्य, अपने साथियों तक के शब्दों को सेन्सर करने का अधिकार मिला हुआ है। किसी भी पत्रकार को जर्मनी में उस समय तक नौकरी नहीं मिल सकती जब तक कि प्रचार-मंत्री, डाक्टर गोबेल्स, उस पर अपनी स्वीकृति की मोहर न लगा दें। इन सख्तियों के होते हुए क्या आश्चर्य है कि १९३३ से जर्मनी के १४०० पत्र अकाल-मृत्यु को प्राप्त हुए।

गोरिंग और गोबेल्स दोनों का नाम एक ही अक्षर 'ग' से शुरू होता है पर दोनों में बनती नहीं है। दोनों एक दूसरे से ईर्षा रखते

दोनों की पत्नियों में भी जर्मन-साम्राज्य की प्रथम नारी होने के लिए अच्छी ख़ासी प्रतिद्वन्द्विता रहती है।

दूसरे हिटलर

गोरिंग और गोबेल्स के बाद छोटे हिटलरों में हैस, हिमलर, रिबनट्राप, रोज़नबर्ग, फ्रिक, ब्रुकनर आदि का नाम आता है। वर्तमान युद्ध के शुरू होते ही हिटलर ने अपने एक भाषण में कहा था कि 'यदि मैं युद्ध में मारा जाऊँ तो मेरी जगह फ़ील्ड मार्शल गोरिंग जर्मनी के सर्वेसर्वा बनेंगे और यदि वे भी काल के ग्रास हो जायँ तो मैंने हर हैस को जर्मनी का स्वामी नियुक्त कर दिया है।'

हर हैस कौन है ? उसका जन्म मिस्र के अलक्ज़ेंड्रिया नामक नगर में १८९६ में हुआ था। वह हिटलर का निजी सहायक है, नाज़ीदल का उपनेता है और मंत्रिमंडल का सदस्य भी है, यद्यपि उसको प्रबन्ध के लिए कोई विभाग नहीं दिया गया। १९२३ में वह हिटलर का मंत्री बना था।

हैस हिटलर के सबसे ज़्यादा निकट है। उसके अधिकार में कोई विभाग नहीं है पर वह एक महकमे से दूसरे महकमे को जोड़ने (Co-ordination) का कार्य करता है। कोई भी व्यक्ति किसी भी कार्य के लिए हिटलर के पास पहुँचना चाहे तो बिना हैस की सहायता के उसे नेता के दर्शन नसीब नहीं हो सकते।

हिमलर गेस्टापो का प्रधान है, उसका सविस्तार वर्णन हम पहले

कर चुके हैं। फ्रिक हिटलर के पहले मंत्रिमंडल में ही गृहमंत्री नियुक्त हुआ था। तभी से वह इसी पद पर काम कर रहा है। नाज़ियों में वह बड़ा प्रभावशाली समझा जाता है। लैफ्टिनेंट ब्रुकनर हिटलर का अंगरक्षक है। वह कभी हिटलर से दूर नहीं रहता। इस जोड़े को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। रोह्म की गिरफ़्तारी के समय भी ब्रुकनर हिटलर की बग़ल में खड़ा था। वह हिटलर के कमरे के बिल्कुल नज़दीकवाले कमरे में ही सोता है।

रिबनट्राप विदेशी मामलों में हिटलर का सलाहकार है। युद्ध छिड़ने से पहले लन्दन में वह जर्मनी की ओर से राजदूत बनकर रहता था। रिबनट्राप एक फ़ौजी कर्नल का बेटा है। राइन प्रदेश में १८९३ में उसका जन्म हुआ था। इंग्लैण्ड और स्विट्ज़रलैण्ड में उसने उत्तम कोटि की शिक्षा प्राप्त की है। फ्रेंचभाषा और अँगरेज़ी, दोनों ज़बानें वह बड़ी सुगमता से और शुद्ध बोलता है। बहुत-से नाज़ी नेताओं को केवल जर्मनभाषा ही आती है। रिबनट्राप का तीन भाषाओं का ज्ञाता होना हिटलर को उसकी ओर खींचने में सहायक हुआ। कुछ दिन के लिए रिबनट्राप कनाडा में भी रहा है। कोई कहता है वहाँ उसने नीची श्रेणी के लोगों के साथ मज़दूरी की थी और कोई कहता है कि मांट्रीयल के किसी बैंक में नौकरी।

रोज़नबर्ग दार्शनिक है। विदेशी मामलों के अन्दर वह नाज़ियों का गुरु है। हिटलर का उससे बहुत निकट का और घनिष्ठ

सम्बन्ध रहता है। हिटलर के समाचारपत्र 'वाल्किशे बियोबाख्तर' का सम्पादन वही करता है। राइख की दार्शनिक नीति का पिता भी वही है।

जर्मनी में रोज़नबर्ग सबसे ज़्यादा अप्रिय है। इस अप्रियता के कारण हैं उसकी तंगदिली, घमंड और शक्कीपन। हिटलर ने उसे वैदेशिक मंत्री बनाने का वादा किया था। यह वादा उसने तोड़ दिया। अतः रोज़नबर्ग कुछ खिंचा हुआ-सा रहता है। हिटलर की तरह वह भी कारा है।

यूरोप का रावण

यूरोप का रावण

एक लख पूत सवा लख नाती ।
ता रावण घर दिया न बाती ॥

(१)

हिटलर—रावण ?

हाँ ।

शुरू से ही ले लीजिए । रावण को अपने बल पर बड़ा घमण्ड था । अपनी ताक़त के ग़रूर में उसने विविध प्रकार से देवी-देवताओं और ब्राह्मणों को दुख देना शुरू किया । इसी तरह के बहुत-से उत्पात करता हुआ वह एक बार राजा बालि के यहाँ जा पहुँचा । अपने बल की डींग मारते हुए उसने बालि को युद्ध करने के लिए ललकारा । बालि ने उसे पकड़कर अपनी काँख में दबा लिया और ६ महीने तक उसे उसी दशा में अपनी काँख के कारागार में बन्द रखा ।

आवा घरहिं कपीस तब, काँख रहा लंकेस ।
इहि बिधि बीते मास षट, पाए बहुत कलेस ॥

वहाँ से हटाकर फिर बालि ने उसे झोरे की तरह बाँधकर खाट पर डाल दिया । बालि की स्त्री तारा की मेहरबानी से बड़ी मुश्किल से उसे इस क़ैद से छुटकारा मिला ।

मौजूदा रावण—अडोल्फ़ हिटलर—को भी अपने जीवन के कई महीने प्रजातंत्र सरकार के ज़माने में जेलख़ाने में बिताने पड़े । 'माइन-काम्फ़' की रचना भी जेल में ही हुई । प्रेज़ीडेन्ट हिंडनबर्ग ने हिटलर को सदैव दबाए रखा । जब तक वह जीवित रहा हिटलर को जर्मनी का सर्वेसर्वा बनने में सफलता न हुई । एक बार बूढ़े मार्शल के ख़िलाफ़ सिर उठाया भी तो मुँह की खाई । हारकर बूढ़े की मौत का इन्तज़ार करने लगा । हिटलर के लिए हिंडनबर्ग वही था जो रावण के लिए बालि ।

(२)

अब आगे चलिए । रावण के लिए गोस्वामीजी महाराज ने लिखा है—

भुजबल बिश्वहि बश्य कर, राखेसि कोउ न स्वतंत्र ।
मंडलीक महि रावन, राज करै निजमंत्र ॥

इसका अर्थ यह होता है कि रावण ने अपने राज्य में किसी की भी स्वतंत्रता न रहने दी । वह खुद अपनी मर्ज़ी से जो चाहे सो करता था ।

इसके सम्बन्ध में हमें कुछ कहने की ज़रूरत ही नहीं रह जाती,

पिछले पन्नों को पढ़ लेने के बाद गोसाईंजी का रावण के लिए कहा गया यह दोहा अक्षरश: हिटलर के साथ ठीक उतरता है। याद दिलाने मात्र के लिए—

(१) एनेबलिंग एक्ट (Enabling Act)।

(२) प्रेज़ीडेन्ट तथा चांसलर के पदों को मिला देना।

(३) राइखराट का अंत।

(४) क़ानून बनाने का अधिकार अपने हाथ में ले लेना।

(५) प्रान्तों में अपने ही रीजेण्ट नियुक्त करना।

(६) नाज़ीदल के अतिरिक्त दूसरी राजनैतिक पार्टी बनाने को जुर्म क़रार देना, आदि की ओर हम इशारा किये देते हैं।

(३)

रावण बड़ा ज़ालिम, अत्याचारी और बेरहम था। उसके ज़ुल्मों से बेचारे देवताओं का नाक में दम आ गया था। उसके राज में—

अतिशय देखि धर्म की हानी।
परम सभीत धरा अकुलानी॥

धर्म की बहुत हानि देखकर धरती भी बहुत डरी और अकुलाई। वह गऊ का रूप धारण करके वहाँ गई जहाँ सब देवता और मुनीश्वर थे। वहाँ से देवता, मुनि, गंधर्व इन सब लोगों ने मिलकर भगवान् से प्रार्थना की थी। रावण के अत्याचारों से पृथ्वी को मुक्त करने के लिए ही मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् राम ने सूर्यवंश के महाराज दशरथजी के यहाँ अवतार लिया था।

यूरोप के रावण के राज्य में यहूदियों पर जो अत्याचार हुए हैं, उनको जो त्रास दिया गया है वह लंका के रावण के अत्याचारों से कम नहीं। और उस युग का रावण कलियुग की बीसवीं सदी के अत्याचारों के भी वैज्ञानिक तथा क़ानूनी तरीक़ों से कब वाक़िफ़ था ?

(४)

रामायण में आता है कि एक बार श्रीरामचंद्रजी दण्डक वन में ऋषि-मुनियों के आश्रमों के दर्शन करते हुए घूम रहे थे। मुनियों का एक समूह-का-समूह भगवान् के साथ चल रहा था। जहाँ-जहाँ श्रीराम जाते थे वहीं से तपस्वी उनके साथ हो लेते थे।

पुनि रघुनाथ चले बन आगे।
मुनिवरवृन्द चले सँग लागे॥
अस्थिसमूह देखि रघुराया।
पूछा मुनिन्ह लागि अति दाया॥

एक जगह श्रीरामचंद्रजी ने हड्डियों का एक बड़ा ढेर देखा। उसे देखकर उन्हें कुतूहल हुआ, दया आई और उन्होंने साथ के तपस्वियों से पूछा कि यह ढेर कैसा ? मुनियों ने उत्तर दिया कि यह सब हड्डियाँ उन मुनियों की हैं जिनको या तो रावण ने मरवा डाला है या उसकी सेना के राक्षसों ने उन्हें खा डाला है। भगवान् का कोमल हृदय दया से भर गया। उनकी आँखों से आँसू आ गये और उन्होंने—

निसिचरहीन करौं महि, भुज उठाय प्रन कीन।

आज जर्मनी में जाकर ३० जून १९३४ को मारे हुए ११७६ [illegible]न्तों की हड्डियों के ढेर को (यदि वह वहाँ मौजूद हो तो) देखा [illegible]य तो आप क्या कहेंगे ? जिस तरीक़े से इनमें से सैकड़ों बेख़बर [illegible]रपराध लोगों की जीवन-लीला समाप्त की गई उसे देखकर [illegible]रता भी शर्म के मारे नीची गर्दन कर लेगी । रावण ने २४ घंटे [illegible] अन्दर इतने प्राणियों की हत्या की होगी, और इस प्रकार, [illegible]समें सन्देह है ।

(५)

रावण ने अपने छोटे भाई विभीषण को लात मारकर अपने [illegible]हाँ से निकाल दिया था । हिटलर को हम यहाँ रावण से भी दो [illegible]दम आगे पाते हैं । कप्तान रोह्म ने हिटलर को क्या सहायता दी, [illegible]सका उल्लेख हम यथास्थान कर चुके हैं । हम यह भी बतला चुके हैं, [illegible]ोह्म को हिटलर का राजनैतिक पिता कहा जा सकता है । जिस प्रकार पिता पुत्र को खिला-पिलाकर बड़ा करता है उसी प्रकार रोह्म ने अपने दल एस. ए. की सहायता से उसे शक्तिशाली होने में सहायता दी थी । इसका परिणाम ? गिरफ़्तारी और मौत । रावण ने विभीषण को जीवित तो छोड़ा था ।

(६)

कुमुख, अकंपन, कुलिशरद, धूमकेतु, अतिकाय ।

कुमुख, अकंपन, वज्रदन्त, धूम्रकेतु, अतिकाय, कुम्भकर्ण, मेघनाद, [illegible]खरदूषण आदि एक से एक अपने बल का अभिमानी रावण के परिवार में था । हिटलर के दल में गोरिंग, गोबेल्स, रोज़ेनबर्ग, हिमलर,

फ़िक, फ़ंक, हैस, ग्रुकनर आदि अनेक एक से एक कूटनीतिज्ञ तथा क्रूर नाज़ी नेता भरे पड़े हैं। राक्षसों की सेना का रंग काला था। हिमलर की अध्यक्षता में गेस्टापो के सिपाही भी काली पोशाक पहनते हैं और ब्लैक गार्ड—काले रक्षक—कहलाते हैं।

(७)

एक देहाती मसल मशहूर है—रावण ने मतलब के लिए गधे को बाप बनाया था। देखें यहाँ हिटलर रावण की बराबरी का कैसे उतरता है। अभी कुछ दिन पूर्व तक हिटलर सोवियट रूस का कट्टर दुश्मन था उसका कहना था—"रूस के पक्ष में किसी संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने की अपेक्षा मैं अपने जीवन का फाँसी के तख्ते पर लटककर अंत कर लेना ज़्यादा अच्छा समझता हूँ।"

जिस रूस से उसे इतनी घृणा थी उसीसे बिना समझौता किए अपना काम न बनता देखा तो झट से उसने स्टालिन से दोस्ती कर ली।

(८)

रावण की लंका को श्रीहनुमान्जी ने जला दिया था। हिटलर ने खुद अपने ही हाथों से जर्मन राइखस्टाग की विशाल इमारत को जलाकर ख़ाक कर डाला। कहिए कौन बड़ा रहा—हिटलर या रावण?

(९)

श्रीरामचन्द्र से युद्ध होने से पूर्व रावण को उसकी स्त्री मंदोदरी, भाई विभीषण, हनुमान्, अंगद आदि अनेक व्यक्तियों ने समझाया

कि श्रीरामजी से वैर बढ़ाने से कुछ हाथ न आयेगा। मन्दोदरी कहा था—

रामहिं सौंपहु जानकी, नाइ कमलपद माथ।
सुत कहँ राज समर्पि वन, जाइ भजहु रघुनाथ॥

इसका उत्तर रावण ने यह देकर उसकी बात को टाल दिया था—

सुनु तैं प्रिया मृषा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना॥
बरुन कुबेर पवन यम काला। भुजबल जिते सकल दिगपाला॥

श्रीरामचन्द्रजी के चतुर दूत बालि-पुत्र अंगद ने भी उसे इसी तरह की सलाह दी थी। उससे भी रावण ने कह दिया था—"हे मूर्ख, जिनके बल का तुझे अभिमान है ऐसे अनेक मनुष्यों को राक्षस दिन-रात खाते रहते हैं।"

जिनके बल कर गर्व तोहिं, ऐसे मनुज अनेक।
खाहिं निसाचर दिवसनिसि, मूढ़ समुझ तज टेक॥

महावीर श्रीहनुमान्जी की अमूल्य शिक्षा को सुनकर—

बोला बिहँसि महा अभिमानी।
मिला हमहिं कपि गुरु बड़ ज्ञानी॥

रामभक्त विभीषण ने भी विनती करते हुए कहा था—

तात चरन गहि माँगहुँ, राखहु मोर दुलार।
सीता देहु राम कहँ, अति हित होइ तुम्हार॥

"हे प्यारे! चरण पकड़कर माँगता हूँ, मेरा लाड़ रक्खो और सीताजी को रामचन्द्रजी को दे दो जिसमें तुम्हारा कल्याण हो।"

इस नीकी सिखावन के परिणामस्वरूप बेचारे विभीषण को कई कड़ुवे ताने सुनने पड़े और ऊपर से एक लात मिली।

अभिमान और अपनी ज़िद को रखने में हिटलर रावण से

महात्मा गांधी का हर हिटलर को पत्र

"मेरे मित्र मुझसे कह रहे हैं कि मानव-जाति की ख़ातिर मैं आपको पत्र लिखूँ। लेकिन इस ख़याल से कि मेरे द्वारा भेजा गया पत्र गुस्ताख़ी में शुमार होगा, मैंने उनकी प्रार्थना कुछ समय तक न मानी। कोई शक्ति मुझसे कहती है कि मुझे विचार करना चाहिए और अपील का कुछ भी नतीजा हो, अपील करनी ही चाहिए।

यह स्पष्ट है कि आप विश्व में एक ऐसे व्यक्ति हैं जो युद्ध को रोक सकते हैं। युद्ध होने पर यह सम्भव है कि मानवता क्षीण होकर बर्बरता में परिवर्तित हो जाय। क्या आप एक वस्तु के लिए, जिसे आप कितनी ही बहुमूल्य क्यों न समझते हों, यह मूल्य देंगे ही? क्या आप ऐसे आदमी की अपील को सुनेंगे जिसने ख़ुद ही जान-बूझकर लड़ाई को छोड़ दिया है, परन्तु उसे काफ़ी सफलता नहीं मिली?

पत्र लिखकर आपको मैंने कष्ट दिया हो तो मैं आशा करता हूँ कि आप मुझे क्षमा करेंगे।"

(इस पत्र का उत्तर तक हिटलर ने देने की पर्वा नहीं की। 'सीख वाको दीजिए जाको सीख सुहाय।')

लेशमात्र भी कम नहीं है। पोलैण्ड पर आक्रमण करने से पूर्व

ब्रिटिश प्रधान मंत्री मिस्टर नेवाइल चेम्बरलेन, अमेरिकन प्रेज़ीडेन्ट मिस्टर रुज़वेल्ट, बेल्जियम के बादशाह, धर्मगुरु पोप पियस १२ वें, हालैण्ड की रानी आदि यूरोप और अमेरिका के अनेक गण्य-मान्य राष्ट्रों के स्वामियों ने हिटलर से युद्ध न छेड़कर शान्तिपूर्ण उपायों से पोलैण्ड से अपना मामला निपटाने की अपील की थी। महात्मा गांधी ने भी एक पत्र लोगों के कहने-सुनने से हिटलर को लिखा था। हिटलर ने सबकी प्रार्थनाओं तथा अपीलों को अनसुनी कर दिया और युद्ध करना ही उचित समझा।

(१०)

रावण ने सीताजी का हरण किया था। हिटलर ने कई देशों की स्वतंत्रता का हरण किया है।

श्रीजनक-नन्दिनी रावण के हर लिए जाने पर उसकी अशोक-वाटिका में क़ैद रही थीं। पोलैण्ड और दूसरे देशों की आज़ादी भी उसी तरह आजकल हिटलर की अशोक-वाटिका में क़ैद है। जिस प्रकार जानकीजी पुनः श्रीरामचन्द्रजी को मिली थीं, उन्हें भी फिर अपनी स्वतंत्रता प्राप्त होगी। इसमें सन्देह नहीं।